इस पुस्तक के विषय में ...

शुरू से ही मुझे योग की सरल साधनाएँ पसंद आती रहीं हैं। गुरु जी की सरल शिक्षाओं को मैंने एक वैज्ञानिक की भाँति अपने जीवन की प्रयोगशाला में व्यावहारित किया है। इन साधारण शिक्षाओं ने न केवल मुझे अध्यात्म की संपदा से मालामाल किया है अपितु मेरे जीवन की धारा स्वार्थ से परमार्थ की ओर मोड़ने में एक अहम् भूमिका निभाई है। आधुनिक युग में अधिकांश मानव भोग विलास की संस्कृति में डूबे हुए अनेक अनचाहे रोगों और दु:खों को आमंत्रित कर रहे हैं। भ्रष्टाचार, बेईमानी, धोखाधड़ी को हमने अपनी जीवन शैली का एक अभिन्न अंग स्वीकार कर लिया है। क्यों आखिर क्यों ? मानव निराशा और नकारात्मक सोच के गर्त में क्यों इतना अधिक डूबता जा रहा है। परमगुरु स्वामी शिवानन्द की कविता जिसमें उन्होंने लिखा है - लोग चाहे ईमानदारी के लिए तुम्हारा मजाक उड़ाएँ, फिर भी तुम अपनी ईमानदारी मत छोड़ो, लोग तुम्हारी भलाई के बदले में चाहे तुम्हें बुराई दें, फिर भी तुम भलाई करना मत छोड़ो, मुझे आन्तरिक शक्ति प्रदान करती है। उनके सरल वाक्य जब मैंने अपने जीवन में व्यावहारित किए तो मुझे उनके सांसारिक तथा आध्यात्मिक अनेक लाभ प्राप्त हुए। यही इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए व्यक्ति यदि इन साधनाओं को व्यावहारित कर पाता है तो अपने जीवन में सुख, शान्ति और अनन्त प्रसन्नता की बौछारों का सतत अनुभव कर सकता है। दु:ख के काले बादलों से हतोत्साहित न होते हुए, उन्हें अपने लिए सीखने का अवसर मानते हुए, व्यक्ति दु:ख में भी मुस्कराने की कला का विकास कर सकता है।

अत्यधिक निराशा, चिन्ता, तनाव एवं विषाद से मुक्ति प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें :-

प्रीति अग्रवाल, क्वा.नं.2ए, सड़क-24, सेक्टर-9, भिलाई-490009, छत्तीसगढ़।

मो. 09907180679, 09425236266

ई-मेल : pritiyogawelfare@gmail.com

वेबसाईट: www.pritiyogawelfare.com

संपर्क समय : 7 p.m. to 8 p.m.

मेरी सरल साधनाएँ

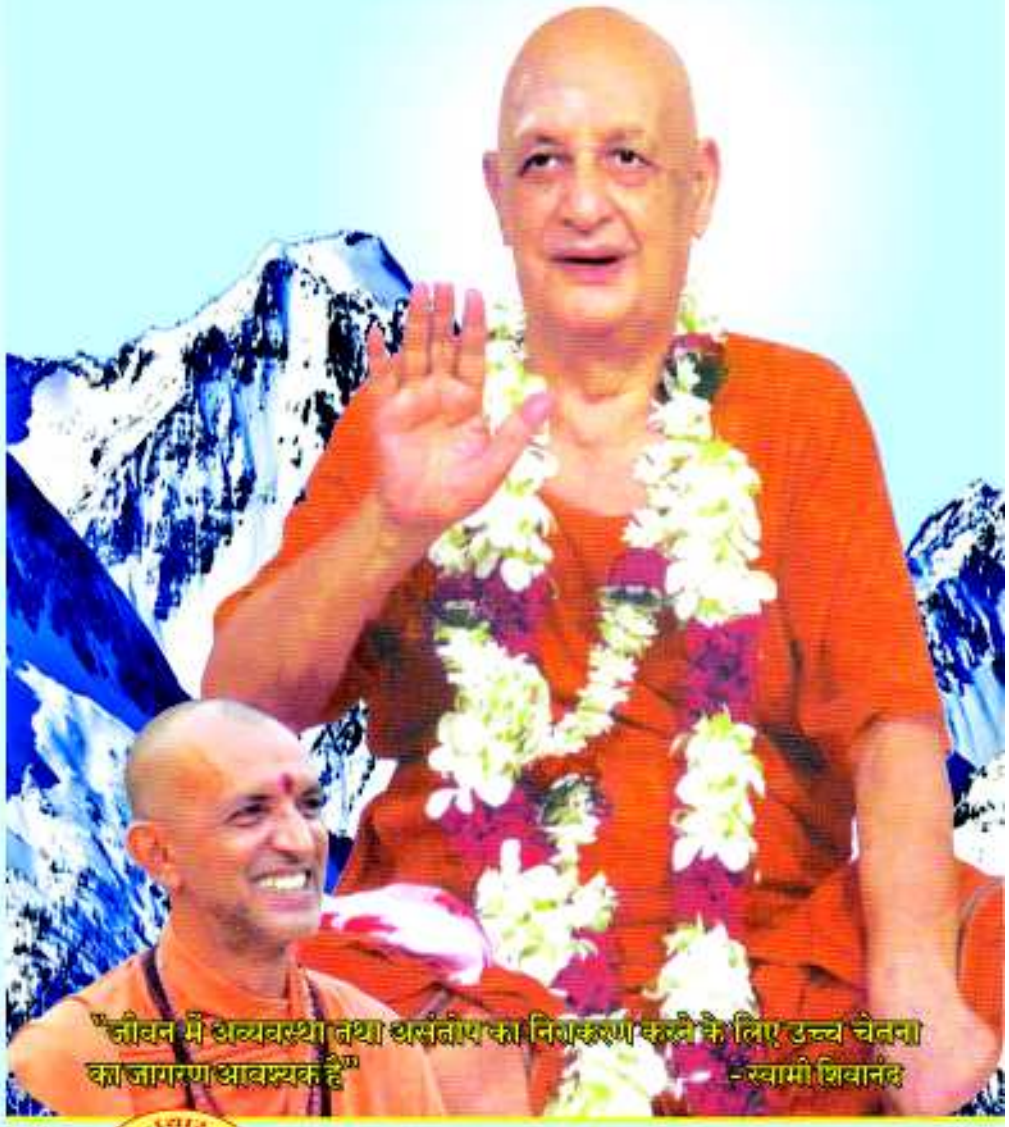

प्रीति अग्रवाल

(ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी प्रकाशन)

मेरी सरल साधनाएँ

प्रीति अग्रवाल

(ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी प्रकाशन)

अच्छे बनो। अच्छा करो।

Be Good. Do Good .

An Appeal

This book is being written by divine inspiration of Param Guru Swami Sivananda and infinite blessings of Paramhansa Swami Satyananda Saraswati. Paramhansa Swami Niranjanananda Saraswati (Paramacharya of world's first Yoga University "Bihar yoga Bharti") is guiding this writing. These books are distributed free of cost and donated to a number of libraries and old age homes as **gyan prasad** for public health and welfare. "Dissemination of spiritual knowledge is the highest service and ensures eradication of all evil qualities"- Swami Sivananda.

To publish 3000 copies of one book approximately Rs 40,000 is required. I request donors to contribute generously for this noble mission. Please send donations by draft, moneyorder or account payee cheque in favour of **'Gyan Yagya welfare Society'** and post to the following address.

PRITI AGGARWAL,
Qr 2A, Street 24, Sector 9, Bhilai 490009, Distt- DURG (C.G.), India
Tel : 09907180679, 09425236266

एक अपील

यह पुस्तक परम गुरु स्वामी शिवानन्द की दिव्य प्रेरणा और परमहंस स्वामी सत्यानंद के असीम अनुग्रह की परिणति है। विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय बिहार योग भारती के परमाचार्य स्वामी निरंजनानंद सरस्वती इस लेखन का मार्गदर्शन कर रहे हैं। लोक कल्याण के लिए इन पुस्तकों का वितरण नि:शुल्क **ज्ञान प्रसाद** के रूप में, जन साधारण में किया जा रहा है। विश्व के अनेक पुस्तकालयों तथा वृद्धाश्रमों में इन पुस्तकों को भेंट स्वरूप भेजा गया है। 'ज्ञान का वितरण सर्वोत्तम सेवा है और इससे समस्त दुर्गुणों का निराकरण सम्भव है। '- स्वामी शिवानन्द

इस पुस्तक की 3000 प्रतियाँ छपवाने में लगभग 40,000 रूपये तक का खर्च आ रहा है। मेरी समस्त पाठकों से करबद्ध प्रार्थना है कि वे मुक्त हस्त से लोक कल्याण के इस कार्य में सहयोग दें। दान की राशि मनीआर्डर, एकाउंटपेयी चेक अथवा ड्राफ्ट के माध्यम से **'ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी'** के नाम से निम्नलिखित पते पर भेजें।

प्रीति अग्रवाल
क्वाटर नं. 2ए, सड़क-24, सेक्टर-9, भिलाई-490009, जिला-दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत। दूरभाष : 09907180679, 09425236266

यह प्रत्येक पुस्तक परमगुरु स्वामी शिवानंद के चरणों में ज्ञान पुष्पमाला के रूप में अर्पित करने के लिए रिखियापीठ एवं शिवानंद आश्रम भेजी जा रही है।

MUTUAL FUND

SAVING KA NAYA TAREEKA

दुर्ग और भिलाई में पहली बार सभी प्रकार के

Mutual Fund

की खरीदी एवं बिक्री की सुविधा एक ही जगह पर उपलब्ध है ...

Tieup : SBI, ICICI, HDFC, AXIS, UTI, Reliance, Birla, L&T, Tata, Kotak, Peerless, Franklin Templeton, Sundaram..

You name it, We have it.

Alok Agrawal

Former Manager : ICICI Prudential Mutual Fund & Morgan Stanley AMC
12 Years of experience

B - 19, Press Complex, Indira Market, Durg

Call . : 9425240800

For Income Tax Rebate U/S 80 C : Invest in

ICICI PRUDENTIAL TAX PLAN	INCEPTION DATE	SINCE INCEPTION RETURN as ON 28/02/2014
	19.08.1999	21.98%

NOTE : MUTUAL FUND INVESTMENT ARE SUBJECT TO MARKET CONDITIONS. PLEASE UNDERSTAND THE SCHEME BEFORE INVESTING.

मेरे गुरु–मेरे प्रेरणा स्रोत

1. स्वामी शिवानंद - (1887-1963) एक चिकित्सक थे। लोगों के दुखों से द्रवीभूत होकर शरीर के चिकित्सक ने सब कुछ त्याग कर आध्यात्मिक जीवन अपनाया। ज्ञान का वितरण उनका प्रिय विषय था। वे कहते थे - जब तुम किसी को ज्ञान देते हो तो उसका संस्कार बनता है और उसका जीवन बदल जाता है। 1936 में उन्होंने ऋषिकेश में दिव्य जीवन संघ की स्थापना की। आज वहाँ भव्य शिवानंद आश्रम, दातव्य चिकित्सालय, कुष्ट आश्रम, योग वेदांत अकादमी एवं प्रेस हैं।

2. स्वामी सत्यानंद - (1923-2009) ने अपने गुरु (स्वामी शिवानंद) के आदेशानुसार सन् 1963 से 1983 तक संपूर्ण विश्व में योग का प्रचार एवं प्रसार किया। मुंगेर (बिहार) में विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा रिखिया (झारखंड) में अनेक कठिन साधनाएँ करते हुए अपने गुरु की तीन मुख्य शिक्षाओं (सेवा, प्यार और दान) को जनकल्याण के लिए व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया।

3. स्वामी निरंजनानंद - (1960) ने 11 वर्ष की अल्पायु से विदेशों में योग का प्रचार और प्रसार किया। मुंगेर (बिहार) में उन्होंने अपने गुरु (स्वामी सत्यानंद) के आदेशानुसार संन्यास पीठ की स्थापना की। संन्यास पीठ में जहाँ एक ओर जन कल्याण के लिए साधकों को संन्यास प्रशिक्षण दिया जा रहा है, वहाँ गृहस्थियों को अपना जीवन उज्ज्वल बनाने के लिए आध्यात्मिक संस्कार भी दिए जा रहे हैं।

4. स्वामी सत्यसंगानंद - (1953) ने 28 वर्ष की अल्पायु से अपने गुरु (स्वामी सत्यानंद) के साथ देश-विदेश की अनेक यात्राएँ की। रिखिया पंचायत के पिछड़े वर्गों के उत्थान का कार्य वे 1989 से अनथक कर रही हैं। वे अपने गुरु की ऊर्जा का एक सशक्त माध्यम हैं और रिखिया जाने वाले सब साधकों का आध्यात्मिक मार्गदर्शन करती हैं।

प्रस्तावना

गृहस्थाश्रम में रहते हुए अधिकतर व्यक्ति सोचते हैं कि केवल खाना, पीना और सोना ही जीवन का उद्देश्य है। भोग-विलास की संस्कृति में पूरी तरह लिप्त मानव केवल काम और अर्थ को ही अपना जीवन मान बैठा है। अनगिनत इच्छाएँ पूरी करते-करते ही यह जीवन हाथ से रेत की भाँति फिसल जाता है। इच्छा पूर्ति के लिए सर्वप्रथम मानव धन कमाने के प्रयास करता है। अर्जित धन से जब इच्छापूर्ति जनित क्षणिक सुख प्राप्त होता है तो उस सुख को ही मानव पकड़े रखना चाहता है। (परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है) काश! ऐसा हो पाता क्योंकि एक इच्छा के पूरी होते ही दूसरी इच्छा प्रकट हो जाती है और व्यक्ति को पुन: व्यथित, बेचैन कर देती है। वह जीवन जो अनन्त सुख, शान्ति और प्रसन्नता प्रदान कर सकता है, सुख और दु:ख के झूले में झूलते-झूलते व्यर्थ ही चला जाता है। परमगुरु स्वामी शिवानन्द और स्वामी सत्यानन्द ने

गृहस्थाश्रम को साधना क्षेत्र बनाने के लिए अनेक सरल साधनाओं का प्रावधान किया है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए, अपने समस्त कर्तव्यों का पालन मनोयोग से करते हुए, व्यक्ति सरलता से अपनी आध्यात्मिक प्रगति कर सकता है। ऐसे गुरु की शरण ग्रहण करने से व्यक्ति को किसी विरोधाभ्यास का सामना भी नहीं करना पड़ता है। भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में स्वधर्म की व्याख्या करते हुए अर्जुन को उपदेश दिया था- व्यक्ति जिस भी आश्रम में है, वहीं रहते हुए यदि पूर्ण मनोयोग से अपने विहित कर्तव्यों का पालन करता है तो उसे मुक्ति सहज ही प्राप्त हो सकती है। एक गृहस्थ महिला यदि अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए ; काम, क्रोध और लोभ को शनै: -शनै: कम करते हुए ; अनजानों को प्यार और दान देती है तो अनेक सिद्धियाँ सहज ही उसे प्राप्त हो जाती हैं। यथा सम्भव अनजानों की नि:स्वार्थ सेवा के रूप में मदद करने से व्यक्ति को अपने जीवन में अनन्त सुख, शान्ति और प्रसन्नता स्वत: ही प्राप्त होने लगती है।

मन वासनाओं तथा संकल्पों से मलिन बना हुआ है। अत: जिस तरह गन्दे पानी में फिटकरी डाल कर उसे निर्मल बनाया जाता है, उसी तरह मलिन मन को भी ब्रह्म चिन्तन से निर्मल बना कर आप वास्तविक ज्ञान प्राप्त करेंगे।

- स्वामी शिवानन्द

विषय सूची

क्र.	शीर्षक	पृ. नं.
1.	स्वामी सत्यानन्द मेरे प्रेरणा स्रोत	1
2.	यह है सेवा !	1
3.	एक शिष्य और बदमाश की कहानी	2
4.	राजकोट का स्वामी नारायण मन्दिर	3
5.	सेवा के अवसर बनाना	3
6.	अपमान सहो, आघात सहो-सबसे ऊँची साधना	4
7.	सब में भगवान को देखो	4
8.	संकीर्त्तन- एक संपूर्ण साधना	5
9.	मन्त्र	6
10.	लिखित जप	6
11.	स्वैन (swan)सिद्धान्त	7
12.	गृहस्थाश्रम में मौन	8
13.	आत्म भाव	9
14.	इच्छाएँ कम करना	10
15.	इच्छा तथा शुभेच्छा	10
16.	क्रिया तथा प्रतिक्रिया	11

17.	आत्मा का भोजन	11
18.	साधना और मन	12
19.	जिह्वा का संयम	12
20.	आध्यात्मिक प्रगति का आधार	13
21.	वैराग्य आखिर क्यों ?	14
22.	साधना में गलतियाँ	15
23.	धन और साधना	16
24.	साधना का मार्ग कठिन क्यों ?	16
25.	साधना में व्यवधान	17
26.	टी.वी. तथा समाचार पत्र	18
27.	मेरा निम्न मन !	18
28.	साधना द्वारा शुद्धिकरण	19
29.	साधना में प्रगति का माप दण्ड	20
30.	वास्तविक गुरु दक्षिणा	21
31.	आध्यात्मिक अनुभव	21
32.	संसार में रहते हुए मोक्ष ?	22
33.	ध्यान द्वारा जीवन में स्वतन्त्रता	23
34.	संसार एक होटल ?	24
35.	सन् 2013 की गुरु पूर्णिमा	25
36.	अटूट श्रद्धा और विश्वास	25
37.	जब मैंने ईश्वर से माँगा (स्वामी विवेकानन्द)	26
38.	मैंने अपने गुरु से माँगा (स्वामी निरंजन)	26
39.	यथा योग्यं तथा कुरू	27
40.	दैनन्दिनी साधना	28
41.	सरल साधनाएँ तथा सूत्र (स्वामी शिवानन्द)	28
42.	साधना का एक सत्य अनुभव	29
43.	When I asked God .... (Swami Vivekanand)	29
44.	Anyway (Swami Sivananda)	30
45.	I asked my Guru (Swami Niranjan)	30
46.	A few Easy Sadhnas	31
47.	मेरा संक्षिप्त परिचय	32
48.	अब तक छप चुकी पुस्तकों की सूची	33
49.	दानदाताओं की सूची	34

1. स्वामी सत्यानन्द - मेरे प्रेरणा स्रोत

मनुष्य का स्वार्थी मन सदैव अपने और अपने परिवार के विषय में ही सोचता है। हम कैसे अपने शरीर को अधिकाधिक सुखी रखें, (विषय भोगों के द्वारा) सुन्दर बनाएँ (सौन्दर्य प्रसाधनों एवं नूतन फैशन के परिधानों द्वारा), दूसरों पर अपनी धाक जमाएँ (धन और सम्पत्ति के साधनों के द्वारा) आदि का चिन्तन अधिकाँश व्यक्तियों के जीवन में सर्वोपरि रहता है। स्वामी सत्यानंद ने अपने सत्संग में कहा है - जब मैं गुरु आश्रम में रहता था तो अनेक व्यक्ति मुझे नौकरी करने के लिए बुलाते थे। एक बार अपने गुरु स्वामी शिवानन्द को बिना बताए मैंने एक स्थान पर अपनी नौकरी की स्वीकृति दे दी। मेरे गुरु जी चाहते थे कि मैं संन्यास ग्रहण कर लूँ, परन्तु मैं उस समय संन्यास लेना नहीं चाहता था। चूँकि मेरे पास ढंग के कपड़े भी नहीं थे, अत: जहाँ मैंने नौकरी की स्वीकृति दी थी, उन लोगों ने मुझे पेशगी के रूपये भी भेज दिए। उन रूपयों से मैंने अपने लिए एक सूट तथा कुछ अन्य वस्त्र खरीद लिए। जब मैं स्वामी जी से छिप कर, अपना बक्सा लेकर पीछे के रास्ते से आश्रम छोड़ कर जाने के लिए निकला तो उन्होंने (स्वामी जी ने) मुझे पकड़ लिया और पूछा-क्यों, कहाँ जा रहे हो ? मैंने स्वामी जी से कहा- मैं नौकरी करने जा रहा हूँ। यहाँ आश्रम में रह कर भी तो मैं यही काम करता हूँ। तब स्वामी जी ने कहा- यहाँ आश्रम में तुम सब कार्य मेरे लिए करते हो। जब कर्म इस भाव से किए जाते हैं तो पुराने संचित कर्मों का क्षय होता है। संसार में तुम सब कार्य अपने लिए करोगे, अत: तुम अनेक कर्म संचित करोगे। गुरु जी की यह बात मुझे समझ आ गई और मैंने आश्रम छोड़ कर जाने का निर्णय बदल लिया।

स्वामी जी का यह सत्संग पढ़ कर मैं सोचती हूँ, मनन चिन्तन करती हूँ, जब संसार में रहते हुए व्यक्ति दूसरों के लाभ के लिए कर्म करता है तो क्या वह अपने संचित कर्मों का क्षय नहीं करता ? ज्ञान यज्ञ करते-करते (पुस्तकें लिखते, छपवाते, बाँटते तथा दान माँगते हुए) कभी - कभी यह विचार मेरे मन में कौंधता है - मैं आखिर यह क्या कर रही हूँ, क्यों कर रही हूँ ? ऐसे समय गुरु जी का यह सत्संग मुझे प्रेरणा देता है और मेरे निम्न मन का हनन करने में एक अहम् भूमिका निभाता है। गुरु जी की आज्ञा ' सेवा करते जाना' को मंत्र मानकर मैं पूर्ण जोश से इस पुनीत ज्ञान यज्ञ में अपने स्व की आहुति पुन: देने के लिए उद्यत हो जाती हूँ।

2. यह है सेवा !

परमगुरु स्वामी शिवानन्द द्वारा स्थापित शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में सन् 2009 में एक सप्ताह के लिए रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। वहाँ के समाधि मन्दिर में स्वामी जी के अनेक प्रेरणास्पद तैल चित्र लगाए गए हैं। एक चित्र में स्वामी जी एक व्यक्ति को अपने कन्धे पर उठा कर ले जाते हुए दिखाए गए हैं। उस चित्र के नीचे लिखे हुए विवरण में मैंने पढ़ा-एक रोगी व्यक्ति को अनेक किलोमीटर (लगभग 5-7) कन्धे पर उठा कर स्वामी जी इलाज के लिए अस्पताल ले कर गए थे। सेवा का भाव स्वामी जी के अन्दर इतना गहन था कि वे अपनी परवाह किए बिना हैजे और टायफाइड के रोगियों के साथ भी बेहिचक सो जाते थे। एक साधु को दवा देने के लिए अनेक

किलोमीटर तक दौड़ कर वे स्वयं चले गए थे।

स्वामी सत्यानन्द ने लिखा है - एक बार स्वामी चिदानन्द पेड़ के नीचे पड़े हुए अत्यधिक कोढ़ी रोगी को बोरे में डाल कर सेवा करने के लिए आश्रम में ले आए। हम दोनों ने उनकी दवाइयों के खर्च का हिसाब लगभग 4000 रूपये लगाया। अचानक स्वामी जी वहाँ पर आए और न केवल हमें उतने रूपये रोगी की दवाइयों के लिए दे दिए अपितु सेवा करने के लिए प्रोत्साहित भी किया। अन्तत: हम दोनों ने उस कुष्ट रोगी की सेवा आरम्भ कर दी। नि:सहाय अवस्था में होने पर भी वह रोगी बहुत गर्म मिजाज का था और दिन-रात हम दोनों को गालियाँ देता रहता था। एक दिन उसकी शेव (हजामत) करते समय मेरा हाथ हिल गया तो उसने तुरन्त मुझे एक चाँटा मार दिया। स्वामी चिदानन्द जी से दवाई लगाते हुए हाथ थोड़ा सा दब गया तो उनके मुँह पर थूक दिया। स्वामी चिदानन्द ने कहा- 'भगवन, गलती हो गई, क्षमा कर दीजिए अब ऐसा नहीं होगा।' मैंने तो स्वामी चिदानन्द को कह दिया- आप संभालिए अपने भगवान को, मैं ऐसी सेवा करने से बाज आया। जब स्वामी शिवानन्द को इस बात का पता चला तो उन्होंने मुझे बुलाया और कहा- यह सेवा तुम अपनी आन्तरिक शुद्धि के लिए कर रहे हो।

स्वामी शिवानन्द ने अपने चरित्र से अपने करोड़ों शिष्यों को सेवा द्वारा आन्तरिक शुद्धि का सरल मार्ग दिखाया है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति सेवा के प्रत्येक अवसर का लाभ उठा सकता है और अपने अन्दर स्थित ईश्वरीय प्रकाश का दर्शन कर सकता है।

3. एक शिष्य और बदमाश की कहानी (स्वामी चिदानन्द की शिक्षाओं से)

एक गाँव के बाहर एक साधु रहता था। अनेक व्यक्ति साधु के प्रवचन सुनने के लिए प्रतिदिन शाम को जाते थे। राम नामक एक व्यक्ति साधु की बहुत सेवा करता था और उनकी शिक्षाओं को एक हद तक व्यावहारित करने का प्रयास भी करता था। कुछ माह के पश्चात् वह साधु उस गाँव से दूसरे गाँव में चला गया। बीच में कभी-कभी वह साधु इस गाँव में दो-चार दिन रहने के लिए आता था। राम साधु को गाँव में होने वाली समस्त गतिविधियों की सूचना देता था। उस गाँव से कुछ दूरी पर एक बदमाश व्यक्ति रहता था। राम उस बदमाश के सारे काले करतूत विस्तार पूर्वक साधू को बताता था। इस प्रकार एक वर्ष बीत गया।

लगभग दो वर्ष के पश्चात् वह साधु पुन: उस गाँव में वापस आया। राम ने साधु की बहुत सेवा की तथा उस बदमाश की अनेक कहानियाँ साधु को सुनाई। साधु ने राम से कहा- अच्छे कार्य करते हुए, अच्छा भाव रखते हुए भी उस बदमाश ने तुम्हारे अन्त:करण को एक हद तक आच्छादित कर लिया है। यह ठीक नहीं है, तुम उस बदमाश के बारे में सोचना और बात करना बन्द करो। मैं सोचती हूँ, मनन- चिन्तन करती हूँ, आज संसार में अनेक व्यक्ति ईश्वर नाम स्मरण करते हुए भी, अच्छे कार्य करते हुए भी यदि दूसरों के दोषों का चिन्तन तथा बखान करते रहते हैं तो अपना ही नुकसान करते हैं। योग के नियमित अभ्यासों द्वारा व्यक्ति अपने मन की

वृत्तियों के प्रति न केवल सजग बनता है अपितु अनावश्यक वृत्तियों का निराकरण भी कर पाता है।

4. राजकोट का स्वामी नारायण मन्दिर

गतवर्ष मुझे राजकोट (गुजरात) के स्वामी नारायण मन्दिर में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। खूबसूरत शिल्प कला से सुसज्जित यह भव्य मंदिर काफी विशालकाय है। मुख्य मंदिर के आस-पास छोटे-छोटे अन्य मंदिर भी बने हुए हैं। जब उन आस-पास के अन्य मंदिरों को देखने के लिए हम लोग जाने लगे तो चबूतरे पर बैठे हुए भक्तों ने मेरे पति और भाई को तो आगे जाने दिया परन्तु मुझे रोक दिया। मुझे मन मसोस कर महिलाओं के पास ही बैठना पड़ा। खैर! आरती का समय समीप था और मन्दिर में पर्दा डला हुआ था, अत: मैं भगवान की मूर्तियों के दर्शन की अभिलाषा लिए इन्तजार करने लगी। कुछ क्षण में आरती प्रारम्भ होने के साथ-साथ विभिन्न रंगों के प्रकाश के साथ अति सुन्दर भगवान के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वह दृश्य बहुत सुन्दर था। आरती में भी मुझे बहुत आनन्द आया और प्रभु की दिव्य उपस्थिति का प्रत्यक्ष अहसास हुआ।

आरती समाप्त होने के पश्चात् जब मैंने एक नवयुवती से पूछा कि मुझे आगे क्यों नहीं जाने दिया गया तो उसने कहा - जब तक मन्दिर में संन्यासी (जो आरती करते हैं) रहते हैं तब तक महिलाओं को वहाँ जाने नहीं दिया जाता है। मैं सोचती हूँ, मनन- चिन्तन करती हूँ - क्या संन्यास ग्रहण करने के पश्चात् भी ये पुरुष इतने कमजोर हैं कि स्त्री के दर्शन मात्र से अपना संयम खो बैठेंगे? कितने कमजोर मन के अधिपति हैं ये संन्यासी!

मेरे अनुरोध पर अनेक बार परमहंस स्वामी निरंजनानंद ने मुझे अपने श्री चरणों में बिठाया और मेरी आध्यात्मिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया है। रिखियापीठ की अध्यक्षा स्वामी सत्यसंगानंद को परमहंस स्वामी सत्यानंद ने अनेक वर्ष पूर्व अपनी उत्तराधिकारी चुना। अनेक पूर्ण महिला संन्यासिनें रिखियापीठ और मुंगेर में अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए सतत सेवारत हैं।

5. सेवा के अवसर बनाना

स्वामी चिदानन्द ने लिखा है - प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में शुभ कार्य करने के अवसर बनाने चाहिए और उनका लाभ उठाना चाहिए। उदाहरणतया प्रत्येक व्यक्ति अपने जन्मदिन पर गरीबों, निराश्रितों, रोगियों को कुछ दान दे सकता है अथवा उनकी मदद सेवा के रूप में कर सकता है। गुरु/ ईश्वर कृपा प्राप्त करने का यह सरलतम साधन है। अपने जन्मदिन पर वृद्धाश्रम तथा अस्पताल में अपनी पुस्तकें बाँटते हुए स्वामी जी का यह लेखन मुझे एक गहन ऊर्जा तथा आन्तरिक प्रसन्नता से सहज ही परिपूरित कर जाता है। स्वामी जी ने यह भी लिखा है कि यह सबसे बड़ी गुरु दक्षिणा है।

गुरुदेव के जन्मदिवस पर प्रत्येक शिष्य सरलता से उनकी इस शिक्षा को कार्यान्वित कर

सकता है और जहाँ भी जिस परिस्थिति में वह है गुरु दक्षिणा देने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता है। मैं सोचती हूँ, मनन-चिन्तन करती हूँ, आखिर किसी को कुछ देने का सौभाग्य किस्मत वालों को ही तो मिलता है!

6. अपमान सहो, आघात सहो-सबसे ऊँची साधना

स्वामी शिवानन्द ने जन साधारण के आध्यात्मिक उत्थान के लिए यह साधना प्रदान की। यह वाक्य यद्यपि दिखने में अत्यधिक सरल है परन्तु व्यावहारित करने में बहुत कठिन है। हमारा मन जैसे ही अपमान भरे शब्द सुनता है, हमें विद्रोह करने के लिए उकसाता है। बचपन से हमने अपने आस-पास के वातावरण में यही तो देखा है। अधिकतर यह भी देखा जाता है कि सहनशील और चुप रह जाने वाले व्यक्ति को कमजोर समझा जाता है। अनेक परिस्थितियों में व्यक्ति अपमान को विष के घूँट के समान उस समय पी तो जाता है परन्तु अन्दर ही अन्दर कुढ़ता रहता है। कालान्तर में यही आक्रोश अनेक रोगों को जन्म देता है। भगवान ईसा मसीह ने कहा- यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मार देता है तो तुम अपना दूसरा गाल उसके सामने कर दो। आज कलियुग में यह शिक्षा कार्यान्वित करना असम्भव ही प्रतीत होता है।

योगविद्या में पढ़े हुए एक दृष्टांत का वर्णन कर रही हूँ - श्रीमती कृष्णा देवी रामायण की कथा वाचिका हैं। स्वामी सत्यानंद ने उनको "मानस कोकिला" कहा क्योंकि उनका स्वर कोयल के समान मीठा है। उनके सुमधुर गायन में व्यक्ति अपनी सुधन्बुध खो बैठता है। अनेक वर्ष पूर्व स्वामी जी के साथ कथावाचन करने के लिए कहीं जाते हुए जब वे रेलगाड़ी में चढ़ीं तो उनकी आँखों में आँसू भरे हुए थे। स्वामी जी ने पूछा- क्यों तुम्हें कोई कष्ट है क्या? कृष्णा देवी ने कहा- जब भी मैं अपने पुत्र मानस को साथ लेकर कथा के लिए जाती हूँ तो (मेरी सास) माँ बहुत क्रोधित होती हैं। अब आप ही बताइए, मैं क्या करूँ? कथा करना छोड़ दूँ क्या? स्वामीजी ने कहा- देखो, तुम तप करने जंगल में तो जाओगी नहीं। गृहस्थाश्रम में रहते हुए यही तुम्हारा तप है। यदि उनके इतना क्रोध करने के बावजूद तुम उनको प्यार कर पाओगी और उनकी सेवा करोगी तो तुम्हें सिद्धि प्राप्त होगी। इतने छोटे बच्चे को लेकर जगह-जगह कथा करने जाओगी तो सास गुस्सा नहीं करेगी तो और क्या करेगी? कृष्णा देवी ने कहा- ऐसा कह कर स्वामी जी ने मेरी सोच ही बदल दी। और उनकी कृपा से एक समय ऐसा भी आया जब मेरी सास भी मेरे साथ कथा सुनने के लिए जाने लगीं।

7. सब में भगवान को देखो

एक दिन दैनिक यज्ञ के पश्चात् मुझे परमगुरु स्वामी शिवानन्द का (सूक्ष्म) आदेश मिला- अपनी नौकरानी को भगवान के रूप में देखो। उस समय मुझे यह आदेश एकदम अव्यावहारिक लगा था। फिर भी मैंने इसे व्यावहारित करने का प्रयोग किया। सर्वप्रथम यदि मुझे नौकरानी को भगवान के रूप में देखना है तो उसकी गलती पर क्रोध नहीं करना है। यह मेरे लिए एक चुनौती थी। धीरे-धीरे अनथक प्रयास से मैंने प्यार से उसे उसकी गलती समझानी शुरू की। परन्तु जब

वह गलती बार-बार होती थी तो मेरे सब्र का बाँध टूटने लगता था। फिर एक दिन मैंने उसे प्यार से कहा- अब जब तुम सुबह काम करने देर से आओगी तो सजा के रूप में तुम्हें अधिक काम करना पड़ेगा। यद्यपि मुझे उम्मीद नहीं थी कि यह तरीका काम करेगा परन्तु मैंने देखा कि धीरे-धीरे वह सो कर जल्दी उठने लगी और थोड़ा जल्दी काम करने आने लगी।

इस प्रकार संयम से व्यवहार करते हुए न केवल मेरे और उसके संबंधों में सुधार हुआ अपितु वह मेरा अधिक काम भी खुश हो कर करने लगी है। आन्तरिक रूप से उसको भगवान के रूप में देखते-देखते मेरे क्रोध का एक हद तक निराकरण स्वत: ही हो गया है। ज्ञान यज्ञ करते हुए, प्रत्येक व्यक्ति को पुस्तकें ज्ञान प्रसाद के रूप में बाँटते हुए, मैं सोचती हूँ - ईश्वर इस रूप में मेरे जीवन में आए हैं। गुरु जी की शिक्षा को अपनाते हुए मैं मानसिक रूप से सहज ही उन के श्री चरणों से जुड़ी रहती हूँ। धीरे-धीरे अन्य व्यक्तियों को भी मैं भगवान के रूप में देख पा रही हूँ और अपने क्रोध, अविश्वास, भय और द्वेष का निराकरण कर पा रही हूँ। सामने वाला व्यक्ति यदि मेरा अपमान करता है तो मैं सोचती हूँ - ईश्वर इस रूप में आ कर मेरी सहनशक्ति बढ़ा रहे हैं। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - हृदय को शुद्ध करने की यह एक सशक्त साधना है।

8. संकीर्त्तन -एक संपूर्ण साधना

भक्ति का मार्ग सबसे सरल साधना है। भक्ति में द्वैत भाव प्रमुख रहता है। द्वैत का अर्थ है दो अर्थात् भक्त तथा भगवान, दो अलग-अलग सत्ताओं का सतत अहसास। इस मार्ग में भक्त अपना सर्वस्व अपने भगवान को धीरे-धीरे सौंपते हुए अपने स्व का पूर्ण समर्पण करता है। संकीर्त्तन का अर्थ है प्रभु के नाम का संगीत के साथ गायन। संकीर्त्तन में जिस भक्त का जितना भाव शुद्ध एवं प्रबल होता है उतनी ही कृपा प्रभु की अनुभूति के रूप में उसे प्राप्त होती है। प्रभु की अनुभूति जिस भक्त को एक बार हो जाती है वह अधिकाधिक भक्ति के रस में डूबता जाता है। श्रद्धा और विश्वास हर भक्त की महत्वपूर्ण संपत्ति है और प्रभु की अनुभूति श्रद्धा और विश्वास को दृढ़ करने में एक अहम् भूमिका निभाती है।

परमगुरु स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - जिस प्रकार एक सपेरा बीन द्वारा साँप को अपने वश में कर लेता है, उसी प्रकार यह चंचल मन भी संगीत द्वारा शीघ्र ही एकाग्र हो जाता है। संकीर्त्तन द्वारा ईश्वर का दर्शन एवं अनुभूति सबसे सुलभ है। अनेक भक्तों को संकीर्त्तन के द्वारा भाव समाधि प्राप्त हो चुकी है। सन् 2007 में रिखियापीठ के शतचण्डी यज्ञ में परमहंस स्वामी सत्यानंद खड़े-खड़े ही भाव समाधि में चले गए थे। अनेक उपस्थित श्रद्धालुओं ने इस दृश्य को देखा, आत्मसात किया और संकीर्त्तन की महिमा को समझा। कुछ समय प्रतीक्षा करने के पश्चात् स्वामी निरंजन उन्हें सहारा देकर अन्दर उनके कुटीर में ले कर गए थे।

नाद (ध्वनि) ही संकीर्त्तन का मुख्य अवयव है। योग की मान्यता के अनुसार जो बाहर दिखता है वह हमारा स्थूल शरीर है। इसके बाद सूक्ष्म तथा कारण शरीर हैं। कारण शरीर में अनेक जन्मों के कर्म तथा संस्कार संचित हैं। एक ही परिवार में पैदा होने वाले दो व्यक्तियों का व्यवहार /

चरित्र इन्ही संचित संस्कारों की वजह से भिन्न-भिन्न होता है। संकीर्त्तन की ध्वनि तरंगों द्वारा कारण शरीर तक न केवल पहुँचा जा सकता है अपितु उस की शुद्धि भी की जा सकती है। नियमित रूप से संकीर्त्तन सुनने तथा गायन करने से ईश्वर अनुभूति शीघ्र ही होने लगती है। संकीर्त्तन द्वारा समस्त शारीरिक तथा मानसिक रोगों का निवारण भी किया जा सकता है।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी आस्थानुसार संकीर्त्तन कर सकता है और इसे अपनी साधना का मुख्य अंग बना सकता है। गृहणियाँ घर के कार्य करते हुए कैसेट, सी.डी. प्लेयर, लेपटॉप अथवा मोबाईल द्वारा कीर्तन सुन सकती हैं और इसका लाभ उठा सकती हैं। जब कभी जीवन में अत्यधिक चिंता, निराशा अथवा परेशानी होती है तो मैं भजन-कीर्तन के दिव्यास्त्र का आश्रय ग्रहण करती हूँ और शीघ्र ही नकारात्मकता से मुक्त हो जाती हूँ। संसार में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सदैव उतार-चढ़ाव तो आते ही रहते हैं, संकीर्तन के सरल साधन द्वारा व्यक्ति अपनी आंतरिक शक्ति को बढ़ा सकता है और सुख-दु:ख में समान रहने की कला का विकास कर सकता है। न हर्ष न विषाद-यह वाक्य हम सब के जीवन में अक्षरक्ष: सत्य घटित हो सकता है।

9. मन्त्र

मन्त्र ईश्वर का शब्द शरीर है। मन्त्र मन को बंधन मुक्त कर देता है और मन को एकाग्र करने में सहायक होता है। मन्त्र को मानव ने धर्म से जोड़ा है। मन्त्र ध्वनियों का एक ऐसा समूह है, संकलन है जो विशिष्ट उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया जाता है। उदाहरणतया महामृत्युंजय मंत्र की तरंगों से विभिन्न प्रकार के असाध्य रोगों से मुक्ति संभव है। गायत्री मंत्र की तरंगों से सुप्त प्रतिभा का जागरण संभव है। परमहंस स्वामी निरंजन ग्यारह वर्ष की अत्यायु से ही विदेशों में योग सिखाने चले गऐ थे। विदेशों में उन्होंने अनेक योगाश्रमों की स्थापना के साथ मन्त्रों के महत्व का ध्वनि की तरंगों के आधार पर वर्चस्व स्थापित किया। रिखियापीठ आश्रम में हजारों विदेशी शिष्य मन्त्रों की तरंगों का अनुभव करते हुए देखे जा सकते हैं।

विभिन्न मन्त्रों को जब प्रतिदिन एक निश्चित समय पर उच्चारित किया जाता है तो व्यक्ति के जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन होते हैं। यह एक सरल साधना है जिसके लिए किसी भी कर्मकांड की आवश्यकता नहीं है। गुरु अथवा उचित निर्देशन के अभाव में प्रत्येक व्यक्ति ऊँ, ऊँ नम: शिवाय, गायत्री मंत्र, महामृत्युंजय मंत्र, राम नाम आदि का जप बिना किसी भय के कर सकता है और उसका लाभ उठा सकता है। मन्त्रों की ऊर्जा से व्यक्ति के संपूर्ण व्यक्तित्व में परिवर्तन संभव है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ व्यक्ति का आध्यात्मिक उत्थान भी द्रुत गति से होता है।

10. लिखित जप

किसी भी मन्त्र अथवा सकरात्मक वाक्य को बार-बार लिखने से मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जीवन की कठिन परिस्थितियों में व्यक्ति न केवल अभिवृद्ध गहन इच्छा शक्ति का प्रयोग कर

पाता है अपितु सबके साथ सरलता से सामंजस्य भी बिठा पाता है। संसार में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति का सामना अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों से सतत होता रहता है। अनुकूल समय तो पंख लगा कर कब उड़ जाता है पता ही नहीं चलता परन्तु प्रतिकूल समय में मानो एक-एक पल पहाड़ के समान बीतता है। प्रतिकूलता में निम्न मन लगातार नकारात्मक विचारों का भोजन प्रस्तुत करता है। ऐसे समय में लिखित जप समय बिताने की एक ऐसी साधना है जिससे समय के सदुपयोग के साथ-साथ सकारात्मकता सहज ही प्राप्त की जा सकती है।

जिस किसी मंत्र (ॐ, राम, ॐ नम: शिवाय, श्री मन् नारायण, नारायण, नारायण आदि) अथवा वाक्य (हे ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो; ईश्वर का हर विधान मंगलमय है। आदि) पर आपकी आस्था हो आप नियमित रूप से एक डायरी अथवा कापी में लिख सकते हैं। अनेक वर्षों से इस सरल साधना को करते-करते मुझे इसके अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त हो रहे हैं। स्वामी सत्संगी (रिखिया पीठाधीश्वरी) ने सौन्दर्य लहरी के लेखन को भी एक सशक्त साधना बताया है। आदि शंकराचार्य विरचित सौन्दर्य लहरी के व्याख्यान में स्वामी जी ने लिखा है - इस साधना को नियमित रूप से करने से शारीरिक, मानसिक रोगों का पूर्णतया निवारण संभव है। इस साधना को करते-करते व्यक्ति का तन-मन स्वत: ही अध्यात्म के पुष्पों से सुवासित हो जाता है।

11. स्वैन (SWAN) सिद्धान्त

स्वैन सिद्धान्त परमहंस स्वामी निरंजन द्वारा दिया गया एक ऐसा मापदण्ड है जिसे प्रत्येक साधक और गृहस्थ अपने जीवन में अपना सकता है और आत्मोन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकता है। 1. पहला शब्द "S" जीवन में अपनी शक्ति (गुणों) के प्रति सजग होने का संकेत देता है। कुछ माह पूर्व मेरे पास परामर्श के लिए एक वृद्ध महिला आती थीं। बात-चीत में मैंने अनुभव किया कि वे बार-बार दोहराती थीं - आज मैंने कोई गलती नहीं की। जब मैंने उन्हें अपनी दिनचर्या लिखने के लिए कहा तो उसमें भी यह वाक्य 2-3 बार लिखा गया था। दो-तीन कक्षाओं के पश्चात् मैंने उनसे कहा- आप अपनी अच्छाइयाँ तथा गल्तियाँ दोनों अलग-अलग पृष्ठ पर लिख कर लाइए। जब उन्होंने ऐसा किया तो उनकी अच्छाइयाँ (गुण) उनकी बुराइयों से अधिक थीं। यह देख कर वे स्वयं ही आश्चर्यचकित हो उठीं। एक नूतन आत्मविश्वास ने उनको आप्लावित कर लिया। जीवन में अनेक व्यक्ति अपने गुणों को अवगुणों से अधिक तौलते हैं और अभिमानी बन जाते हैं। यह स्थिति उनके पतन तथा दु:ख का कारण बनती है। हीनता और अभिमान दोनों ही व्यक्ति के आत्मोत्थान में बाधक बनते हैं। 2. दूसरा शब्द "W" जीवन में अपने अवगुणों के प्रति सजग होने का संकेत देता है। अवगुणों के प्रति सजग होना तथा उनका निराकरण करने का प्रयास करते हुए अपने जीवन को उज्ज्वल बनाना ही इस जीवन में व्यक्ति को सुख, शांति तथा प्रसन्नता का दुर्लभ उपहार प्रदान कर सकता है। सर्वप्रथम यह अत्यावश्यक है कि व्यक्ति अपने अवगुणों को पूर्णतया स्वीकार करे। अनेक व्यक्ति अपने दुर्गुणों (क्रोध, लोभ, ईर्ष्या आदि) को जानते हुए भी पूर्णतया स्वीकार नहीं कर पाते हैं। अपने दुर्व्यवहार का कारण वे दूसरों को ही

मानते हैं। उदाहरणतया यदि सामने वाला व्यक्ति क्रोध करता है तो कोई जरुरी नहीं है कि आप भी उसका जवाब क्रोध से दें। 3. तीसरा शब्द "A" जीवन में आपकी महत्वकांक्षाओं के प्रति सजग होने का संकेत देता है। अनेक बार हम अपनी योग्यता से ऊँचा लक्ष्य चुन लेते हैं और जब उस लक्ष्य को हम प्राप्त नहीं कर पाते हैं तो विषाद ग्रस्त हो जाते हैं। उदाहरणतया कुछ विद्यार्थी योग्यता न होने के बावजूद मेडिकल विषय चुन लेते हैं क्योंकि वे डाक्टर बनना चाहते हैं। अनेक साधक अपने अवगुणों (आलस्य, निन्दा, चुगली, कामचोरी आदि) को अनदेखा करके अपने गुरु से उच्च साधनाओं की माँग करने लग जाते हैं। स्वयं को दूसरों की तुलना में ऐसे व्यक्ति हीन समझते हैं जब वे उस लक्ष्य को प्राप्त करने में असमर्थ हो जाते हैं। 4. चौथा शब्द "N" जीवन में अपनी दृष्टि अपनी वर्तमान आवश्यकताओं पर केन्द्रित करने का संकेत देता है। स्वामी जी द्वारा सुनाई गई कहानी मैं इस सन्दर्भ में लिखना चाहूँगी - एक अन्धा व्यक्ति अपने जीवन में सूर्य को देखने की महत्वाकांक्षा रखता है, परन्तु उस व्यक्ति की पहली आवश्यकता आँखों की ज्योति है। अत: उसे ईश्वर से अपनी आँखों की ज्योति प्रदान करने की प्रार्थना करनी चाहिए और उस दिशा में प्रयास भी करना चाहिए। आँखें ठीक हो जाने के पश्चात् वह सूर्य के साथ-साथ प्रकृति के अन्य सुन्दर दृश्य भी देख सकेगा।

अत: मैं समझती हूँ कि व्यक्ति अनावश्यक महत्वाकांक्षाओं के पीछे न भागे अपितु वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने में अपनी बहुमूल्य ऊर्जा का प्रयोग करे। ऐसा करने से जीवन की छोटी-छोटी उपलब्धियाँ उसे स्वत: ही आत्मोत्थान के पथ पर आगे बढ़ा देंगी। अपने अवगुणों का निराकरण करते हुए, अपने गुणों को पोषित (मजबूत) करते हुए उसका जीवन एक अनिवर्चनीय आनन्द से भर उठेगा। आत्मविश्वास उसकी संपत्ति बनेगा और वह अपने व्यवहार से दूसरों को भी प्रेरित कर पाएगा।

12. गृहस्थाश्रम में मौन

स्वामी निरंजन ने अपने सत्संग में कहा- यद्यपि मौन का अर्थ साधारणतया बिल्कुल न बोलने से लगाया जाता है, परन्तु मौन का वास्तविक अर्थ है नपी तुली वाणी। अपने शब्दों को साधना ताकि वे किसी का अहित न करें, किसी की भावनाओं को ठेस न पहुँचाएँ, सरल तो नहीं है। स्वामी जी ने कहा- जिस प्रकार एक लेखक लेख लिखता है और उसे अनेक बार पढ़ता है ताकि वह उसमें से अनावश्यक शब्दों का निराकरण कर सके ; उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को शब्द मुँह से निकालने से पहले अनेक बार सोचना चाहिए। जब तक व्यक्ति में ऐसी मानसिक योग्यता नहीं आ जाती, तब तक नियमित रूप से कुछ घण्टे प्रतिदिन मौन का अभ्यास अवश्य करना चाहिए।

कुछ वर्ष पूर्व जब मैं मुंगेर आश्रम में रहने के लिए गई तो वहाँ मैंने देखा-शाम को 6:00 बजे भजन-कीर्तन के कार्यक्रम के पश्चात् सब उपस्थित व्यक्तियों को सुबह 6:00 बजे तक मौन रखने का आदेश दिया जाता है। अनेक वर्षों से आध्यात्मिक साहित्य पढ़ते हुए, मौन को अपने

जीवन में अपनाने का प्रयास करते हुए, मैं मौन को एक वृहद ऊर्जा के स्रोत के रूप में जान पाई हूँ। मौन पालन करने से समय और ऊर्जा दोनों की ही बचत होती है। मुंगेर आश्रम में चाहते हुए भी, प्रयास करते हुए भी अनेक बार (यदि कोई व्यक्ति आपसे कोई जरुरी बात करता है तो) मौन भंग करना पड़ता था । इसी प्रकार गृहस्थाश्रम में भी अपने मौन के निश्चित समय में इस प्रकार की परिस्थितियाँ आ जाती हैं कि बात करना, जवाब देना आवश्यक हो जाता है। जब-जब मेरे साथ ऐसा होता था (तो यह निम्न मन जो सदैव मुझे सांसारिकता की ओर धकेलता है) सुझाव देता था - मौन बेकार है, जब तुम पूर्णतया उसका पालन नहीं कर सकती तो क्यों इस झंझट में पड़ती हो ?

स्वामी निरंजन का यह सत्संग मुझे वर्तमान के परिपेक्ष में पूर्णतया व्यावहारिक लगा है। अब मैं नियमित रूप से एक निश्चित समय पर मौन व्रत का न केवल पालन कर रही हूँ अपितु मौन भंग करने के अपराध बोध से भी बच पा रही हूँ। गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी व्यक्ति मौन व्रत का पालन करते हुए अनेक अनावश्यक विकारों (काम, क्रोध और लोभ आदि) से सहज ही बचने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

13. आत्मभाव

आत्मभाव का अर्थ है दूसरे के दु:ख को अपना दु:ख समझना और उसे दूर करने का वैसे ही प्रयास करना जैसा व्यक्ति अपने लिए अथवा अपने परिवार वालों के लिए करता है। एक गाँव में एक पंडित जी रहते थे। जब उनके पड़ोसी की गाय मर गई तो उन्होंने उसे बहुत उपदेश दिया और कहा- आत्मा अनश्वर है। गाय और तुम्हारा इतना ही साथ था। उसके मर जाने से तुम शोक मत करो आदि -आदि। कुछ माह पश्चात् पंडित जी की अपनी गाय मर गई। रो-रो कर पंडित जी का बुरा हाल था। उनके पड़ोसी ने जब पंडित जी का ऐसा हाल देखा तो कहा- पंडित जी उस दिन जब मेरी गाय मरी थी तो आप बहुत ज्ञान दे रहे थे। अब आप क्यों रो रहे हैं ? पंडित जी ने रोते-रोते कहा- भैया वह तो आपकी गाय थी, परन्तु यह मेरी गाय है ! हम में से अधिकांश व्यक्ति पंडित जी की भांति ही हैं।

स्वामी सत्यानंद ने लिखा है - जब हम दूसरों के बारे में सोचते हैं, तब ईश्वर हमारे बारे में सोचते हैं। दूसरों के बारे में सोचना और उनके लिए कुछ सार्थक करना ही जीवन में आत्मभाव की शुरुआत है। स्वामी सत्यानन्द ने कहा - जब तुम अपने बच्चे के लिए स्कूल की नई ड्रैस खरीदते हो तो एक ड्रैस सरकारी स्कूल में पढ़ने वाले गरीब बच्चे के लिए भी खरीद लो। यह तुम्हारे लिए स्वाभाविक होना चाहिए। अभ्यास के द्वारा, मनन-चिन्तन के द्वारा यह संभव है। जब ऐसा हम कर पाते हैं तो स्वयं को ईश्वरीय कृपा के अधिकारी बनाते हैं। कहीं न कहीं स्वार्थ में डूबा पाषाण हृदय पिघलने लगता है। शतचण्डी यज्ञ में स्वामी जी ने कहा- मैं एक कुशल हृदय शल्य चिकित्सक हूँ। स्वार्थ के कारण तुम्हारी नाड़ियाँ अवरूद्ध हो चुकी हैं। जब तुम रिखिया आते हो तो मैं तुम्हारी शल्य चिकित्सा (सर्जरी) कर देता हूँ। फलस्वरूप तुम धीरे-धीरे

हृदय की संकीर्णता से मुक्त हो कर उदार बन जाते हो।

गृहस्थाश्रम में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति जो कुछ भी उसके पास है उसे दूसरों के साथ बाँटते हुए आत्मभाव अन्त:करण में रोपित करने का प्रयास कर सकता है। आत्मभाव द्वारा अर्जित आध्यात्मिक संपदा अगले जन्म में भी हमारे साथ जाएगी जब कि सांसारिक धन-दौलत तो संसार में ही छूट जाएगी।

14. इच्छाएँ कम करना

आज का युग विज्ञापन का युग है। विज्ञान के नित-नूतन आविष्कार व्यक्ति के मन को सतत उद्वेलित रखते हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा - हे अर्जुन ये प्रमथन स्वभाव वाली इन्द्रियाँ नियन्त्रण करते हुए साधक के मन को भी बलपूर्वक विषयोन्मुख कर देती हैं। यह काम (इच्छा) ही सब पापों की जड़ है। स्वामी चिदानन्द ने लिखा है - इच्छा, क्रोध, लोभ, आसक्ति, अंहकार और ईर्ष्या मानव के छ: वास्तविक शत्रु हैं जो उसके ईश्वरीय स्वभाव को ढक लेते हैं।

सर्वप्रथम यह महत्वपूर्ण है कि व्यक्ति अपनी इच्छाओं के प्रति सजग बने और स्वयं से प्रश्न पूछे-क्या इस इच्छा के पूरी करने से मुझे स्थाई सुख मिलेगा ? अनेक सन्तों ने इच्छा को सगर्भा कहा है अर्थात् एक इच्छा के पूरी होते ही दूसरी इच्छा का जन्म हो जाता है। अपने विवेक का सतत प्रयोग करते हुए प्रत्येक गृहस्थ इस तथ्य के प्रति सजग बन सकता है और स्वयं को इच्छाओं के माया जाल से मुक्त कर सकता है। मैं अपने जीवन में देखती हूँ कि जैसे ही इच्छा महारानी का मन में पदार्पण होता है, मेरा मन अशान्त और चंचल हो जाता है। यदि विवेक का प्रयोग करते हुए मैं इच्छा को हटाने का प्रयास करती भी हूँ तो यह निम्न मन उस समय तो शांत हो जाता है परन्तु उचित अवसर की तलाश में रहता है। उचित अवसर आने पर जब प्रलोभन सामने आते हैं तो यह अपना सिर पुन: उठाता है और इच्छा पूरी करने के लिए अनेक सुझाव पुन: प्रस्तुत करता है। अनेक बार तो मैं सजगता के अस्त्र द्वारा इसके चँगुल से बच जाती हूँ परन्तु अनेक बार इसके माया जाल में फँस कर गिर भी जाती हूँ। इच्छा पूरी कर लेने के पश्चात् उसका अपराध बोध तथा निरर्थकता का आभास मन को बहुत दु:खी करता है। यही माया है, अपने अनुभवों से इच्छा-तृष्णा-कामना के इस जाल को समझते हुए धीरे-धीरे इच्छाएँ कम करने का अनथक प्रयास करती हूँ और मन की शान्ति का लाभ प्राप्त करती हूँ। 'इच्छा पूरी होने से उसकी शक्ति बढ़ जाती है।'- स्वामी चिदानन्द। उदाहरणतया जब मधुमेह का रोगी मिठाई खा कर अपनी तृष्णा की पूर्ति करता है तो सोचता है - आह ! कितना सुख मिल रहा है। परन्तु उसकी मिठाई खाने की इच्छा बार-बार सिर उठाती है और वह दवाई (इन्सुलिन) की मात्रा बढ़ाता जाता है और मिठाई खाता जाता है ।

15. इच्छा तथा शुभेच्छा

अनेक सन्तों ने इच्छा को सब दु:खों का कारण बताया है। भगवान श्री कृष्ण ने तो गीता में अर्जुन को कहा - इच्छा ही सब पापों का मूल कारण है। इच्छा न पूरी होने से ही क्रोध का जन्म

होता है। इच्छा ही लोभ की जननी है। अपने अनुभवों से मैं समझती हूँ कि इच्छा माया का एक शक्तिशाली अस्त्र है। यह तथ्य भी सच है कि मनुष्य इच्छा के कारण ही कार्य करने के लिए प्रेरित होता है। नियंत्रित इच्छा व्यक्ति के उत्थान का कारण बन सकती है। अध्यात्म की इस राह पर चलते- चलते व्यक्ति के मन में दूसरों की भलाई करने की अनेक इच्छाएँ ईश्वर प्रेरणा से उदित होती हैं। स्वामी चिदानन्द ने लिखा है - शुभेच्छा को तुरन्त पूरा कर लेना चाहिए। स्वामी जी का यह लेखन पढ़ कर मैंने मनन चिन्तन किया - यह निम्न मन निरन्तर अच्छे कार्यों से हटाता रहता है अत: जब दूसरों की मदद करने की इच्छा अन्त:करण में उदित हो तो उसे तुरन्त कार्यन्वित करना ही श्रेयस्कर है। शुभेच्छा का अपनी सामर्थ्यानुसार पालन करने से ईश्वरीय कृपा बहुतायत में प्राप्त होती है।

16. क्रिया तथा प्रतिक्रिया (Act and React)

स्वामी निरंजन ने लिखा है - तुम जीवन की अधिकांश परिस्थितियों में केवल प्रतिक्रिया ही करते हो। यह प्रतिक्रिया सदैव सामने वाले दूसरे व्यक्ति के व्यवहार से प्रेरित होती है। उदाहरणतया यदि दूसरा व्यक्ति हमारी निन्दा करता है तो हम क्रोधित हो जाते हैं अथवा बुरा मानते हुए दु:खी हो जाते हैं। सामने वाला व्यक्ति यदि क्रोध करता है तो हम भी उसका जवाब (यदि सम्भव हो तो) क्रोध से देते हैं अथवा अन्दर ही अन्दर कुढ़ते रहते हैं। यह हमारे अन्त:करण में विक्षेप पैदा करता है।

जब स्वामी जी की इस सरल सी दिखने वाली शिक्षा का मैंने मनन-चिन्तन किया और इसे व्यावहारित किया तो मुझे समझ आने लगा कि मेरे जीवन की खुशियाँ अथवा गम दूसरों के व्यवहार पर ही निर्भर हैं। अनजाने में यह अधिकार मैंने दूसरों के हाथों में स्थानान्तरित कर दिया है। सामने वाले व्यक्ति के व्यवहार से प्रभावित होना एक कमज़ोर मन का लक्ष्ण है। जब कोई हमारी प्रशंसा करता है तो हम गर्व से फूल जाते हैं। जब कोई हमारी निन्दा करता है तो हम हीनता की भावना से ग्रस्त होते हुए अनेक बार अपना आत्मविश्वास भी खो बैठते हैं। आसन, प्राणायाम और ध्यान के अभ्यासों को नियमित रूप से करते -करते मन की शक्ति में वृद्धि होती है और सजगता के गुण का विकास होता है। सजगता के द्वारा व्यक्ति अपनी प्रतिक्रियाओं का नियन्त्रण करना सीखता है और जीवन में अनावश्यक तनावों, चिन्ताओं और दु:खों से सहज ही बच पाता है।

17. आत्मा का भोजन

आखिर कुछ लोग अपराधी क्यों बन जाते हैं और कुछ लोग सच्चे सन्त क्यों बन जाते हैं ? अपने जीवन की यात्रा में मैं देखती हूँ कि अनेक व्यक्ति झूठ बोलने, छल-कपट और धोखा करने में जरा भी झिझकते नहीं हैं। जब-जब मैं लोगों द्वारा छली जाती हूँ तो कुछ समय के लिए स्तब्ध हो जाती हूँ। आखिर कोई ऐसा कैसे कर सकता है ? यह विचार लगातार 2-3 दिन तक मेरे मन को मथता रहता है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - अनेक व्यक्ति जब लगातार झूठ बोलते रहते

हैं, छल-कपट करते रहते हैं तो उनकी आत्मा की आवाज़ क्षीण होती जाती है। हम सब के अन्दर विवेक के रूप में आत्मा की आवाज़ निरन्तर गलत काम करने से हमें चेतावनी देती रहती है। जब हम उस अन्त:करण की आवाज़ को सुनकर, उसकी आज्ञा का पालन करते हैं तो उसकी शक्ति बढ़ जाती है। परन्तु जब हम उस ध्वनि की अवहेलना कर देते हैं और बार-बार ऐसा करते हैं तो कालान्तर में हम उस ध्वनि को सुनने से वंचित रह जाते हैं। स्वामी जी का यह लेख पढ़ कर एक हद तक मेरे संशय का निवारण हुआ है।

अपनी आत्मा को पुष्ट बनाने के लिए व्यक्ति को अच्छा बनना चाहिए और अच्छे कार्य लगातार करने चाहिए। सच्चाई, ईमानदारी, निष्काम सेवा, प्यार और दान के द्वारा हमारी आत्मा को भोजन प्राप्त होता है। ईश्वर नाम संकीर्तन एवं जप भी हमारी आत्मा को पुष्ट बनाता है। हठ योग, कर्मयोग, भक्ति योग आदि सब का उद्देश्य अन्तत: स्वयं को पूर्णरूपेण जानना और पहचानना ही तो है।

18. साधना और मन

साधना में प्रगति करने के लिए मन पर नियन्त्रण अत्यावश्यक है। जब आपके मन में नकारात्मक विचार आएँ तो सजग हो कर उनको अनदेखा करिए। नाम स्मरण द्वारा मन तुरन्त शान्त हो जाता है। अपना दृष्टि-कोण धीरे-धीरे नकारात्मक से सकारात्मक की ओर मोड़िए। प्रत्येक परिस्थिति में अच्छा देखने का प्रयास करिए। बुराई में अच्छाई, कुरूपता में सुन्दरता, पाषाण में जीवन, दु:ख में आनन्द देखने का स्वभाव विकसित करिए। जब आपके मन में विचारों की बाढ़ आए तो केवल अच्छे विचार चुनिए, बुरे विचारों को एक द्रष्टा की भाँति देखते जाइए, वे स्वयं ही निकल जाएँगे।

रोज सुबह एक निश्चित समय (ब्रह्ममुहूर्त) पर बैठ कर अपने मन का अवलोकन करिए। अपने मन की पसन्द और नापसन्द को जानिए, समझिए। प्राणायाम करने से मन शान्त हो जाता है। सद्ग्रन्थों के कुछ श्लोक दोहराने से भी मन शान्त हो जाता है। ध्यान करते समय जब मन भटकता है तो दु:खी अथवा परेशान मत होइए। प्यार से मन को मन्त्र जप में पुन: लगाइए। धीरे-धीरे अभ्यास के द्वारा मन भटकना स्वत: ही कम हो जाता है। धैर्य रखिए। बुराई का बदला भलाई से दीजिए। जो आपसे घृणा करते हैं, उन्हें प्यार करिए।

अनेक व्यक्ति बंद कमरे में आँखें बंद करके बैठ जाते हैं और सोचते हैं कि वे ध्यान कर रहे हैं। यदि आपका मन चंचल है, तो आप अपना समय व्यर्थ गँवा रहे हैं। ऐसे समय सद्ग्रंथों (गीता, रामायण, बाइबिल, कुरान आदि) का अध्ययन करिए और पुन: ध्यान के लिए बैठिए। यह मन इन्द्रियों के माध्यम से हमें बार-बार सांसारिक आकर्षणों से बाँधता है, सजगता के अस्त्र द्वारा धीरे-धीरे मन को प्रशिक्षित करिए।

19. जिह्वा का संयम

जिह्वा का संयम प्रत्येक गृहस्थ के लिए अत्यावश्यक साधना है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा

है - जिस व्यक्ति का अपनी जीभ पर नियन्त्रण है, उस की 50% साधना स्वत: ही सम्पन्न हो जाती है। क्रोध, जिह्वा के असंयम का एक ऐसा परिणाम है जो दो मित्रों को दुशमन बना देता है। भोजन का संयम बहुत कठिन है। संसार में रहते हुए व्यक्ति अनेक विवाहोत्सव, अन्य उत्सव, समारोह तथा पार्टी में जाता है। अनेक प्रकार के आकर्षक व्यजंन बार-बार उसको ललचाते हैं। आस-पास का वातावरण भी व्यक्ति को प्रभावित करता है। अनेक व्यक्ति स्वयं न चाहते हुए भी, दूसरों के दबाव में आ कर गरिष्ठ मसालेदार भोजन स्वास्थ्य खराब होने के बावजूद भी खा लेते हैं। हम जीने के लिए खा रहे हैं अथवा खाने के लिए जी रहे हैं, यह वाक्य प्रत्येक साधक को प्रतिदिन दोहराना चाहिए। अनेक जन्मों से व्यक्ति भोजन को केवल अपनी तृप्ति , आनन्द का साधन समझ कर ग्रहण करता आ रहा है।

हल्का सात्विक भोजन शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए परमावश्यक है। मन की शांति के लिए सादा भोजन ही निश्चित समय पर ग्रहण करना चाहिए। आज कलियुग में रोग का आगमन होने पर भी व्यक्ति अपनी जीभ पर संयम का अंकुश नहीं लगा पाता है। संधिवात गठिया के रोग से उभरने के लिए मुझे भोजन का संयम करना आरम्भ में तो बहुत दुष्कर लगता था, परन्तु धीरे-धीरे जब मुझे इस साधना के स्थूल और सूक्ष्म लाभ प्राप्त होने लगे तो जीवन एक अनिवर्चनीय आनन्द से परिपूर्ण हो गया है। मैं राजयोग की प्रतिपक्ष विचार भावना के द्वारा जिह्वा का संयम कर पाती हूँ। जब गरिष्ठ मसालेदार भोजन अथवा मिठाइयाँ मुझे खाने के लिए प्रस्तुत की जाती हैं तो मैं तुरन्त फलों और हल्के सात्विक भोजन का मनन-चिन्तन करते हुए सोचती हूँ- वह भोजन भी तो मुझे बहुत स्वादिष्ट लगता है। फल और हल्का सात्विक भोजन मेरे स्वास्थ्य के लिए भी बहुत अच्छा है, अत: मैं यह अस्वास्थ्यकर भोजन क्यों खाऊँ ? नियमित रूप से आत्मनिरीक्षण के द्वारा भी व्यक्ति अपनी पुरानी आदतों (चटपटे/मसालेदार/गरिष्ठ व्यंजन आदि खाने की लालसाओं) को धीरे-धीरे परिवर्तित कर सकता है। अस्वास्थ्यकर भोजन शरीर को कमजोर, रोगी और ऊर्जाहीन बनाता है, जैसे-जैसे यह विचार मन में पक्का होने लगता है, व्यक्ति अपनी जिह्वा पर संयम का अंकुश लगा पाता है। स्वाद के लिए भोजन ग्रहण करना तामसिक वृत्ति है - स्वामी निरंजन।

20. आध्यात्मिक प्रगति का आधार

यम और नियम के पालन के बिना आध्यात्मिक प्रगति असंभव है। पाँच यम हैं- सत्य, अंहिसा, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य। ईश्वर सत्य है। यह वाक्य अनेक संतों ने बार-बार दोहराया है। जब हम जीवन में सत्य बोलने का संकल्प लेते हैं और दृढ़ता पूर्वक उसका पालन करते हैं तो हमारी आत्मा शक्तिशाली हो जाती है। आरम्भ में ऐसा करना कठिन अवश्य होता है परन्तु अभ्यास से सब संभव है। स्वामी निरंजन ने अपने सत्संग में प्रिय सत्यवादिता को जीवन में अपनाने का संदेश दिया है। वह सत्य जो दूसरों को प्रिय लगे बोलने से आपका कथन न केवल प्रभावशाली हो जाता है अपितु आपकी आध्यात्मिक प्रगति भी होती है। मन, वाणी और

कर्म में पूर्ण हिंसा का अभाव ही अंहिसा है। दूसरों की निन्दा, चुगली, बुराई करना भी एक प्रकार की हिंसा है और यह प्रवृत्ति अंहकार की द्योतक है। अस्तेय का अर्थ है चोरी न करना। यदि हम गलत, अनैतिक कार्य एकान्त में दूसरों से छिपा कर करते हैं तो वह भी अस्तेय है। अपनी आवश्यकता से अधिक व्यय करना भी अस्तेय है क्योंकि जब आप ऐसा करते हैं तो दूसरों को उनके अधिकारों से वंचित करते हैं। चौथा यम अपरिग्रह है जिसका अर्थ है अनावश्यक संग्रह से मुक्ति। अनेक व्यक्ति वस्तुएँ बहुतायत में संग्रह करके रखते हैं। अनावश्यक संग्रह में उनकी ऊर्जा और समय व्यर्थ जाते हैं, अपनी आसक्ति में वे यह बात समझ ही नहीं पाते हैं। पाँचवा यम ब्रह्मचर्य है जिसका शाब्दिक अर्थ है ब्रह्म में विचरण करना। जब हम अपनी वृत्तियों पर संयम का अंकुश लगाते हैं तो भी हम जीवन में ब्रह्मचर्य का ही पालन करते हैं।

इसी प्रकार महर्षि पतजंलि ने जो नियम शुचिता (अन्दर और बाहर की सफाई), तप, संतोष, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान बताए हैं, वे भी व्यक्ति की आन्तरिक प्रज्ञा जाग्रत करने पर ही केन्द्रित हैं। काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या और अंहकार के शनै: शनै: निराकरण के पश्चात् ही व्यक्ति का मन अन्दर से पूर्णतया शान्त हो पाता है। स्वाध्याय द्वारा व्यक्ति स्वयं को जानता और पहचानता है। सद्ग्रंथों का अध्ययन करने से भी व्यक्ति का विवेक जाग्रत होता है। जब हम "जेहि विधि राखे राम, तेहि विधि रहिए" को अपने जीवन में अपनाने का प्रयास करते हैं तो एक गहन आन्तरिक शान्ति के स्वामी बनते हैं।

स्वामी शिवानन्द ने लिखा है -यदि पाँच यमों में से व्यक्ति एक भी यम लगन और सच्चाई से अपनाता है तो बाकी सब सद्गुण स्वत: ही आ जाते हैं। आसन और प्राणायाम भी आध्यात्मिक प्रगति के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। इसके पश्चात् मन की एकाग्रता और ध्यान का अभ्यास नियमित रूप से एक निश्चित समय पर किया जाना चाहिए। आरम्भ में व्यक्ति को धैर्य का पालन करते हुए धीरे-धीरे इस पथ का अनुगामी बनना चाहिए। श्रद्धा और विश्वास एक साधक की महत्वपूर्ण पूंजी है। कपड़े बदलने (गेरु वस्त्र) अथवा सिर मुंडाने से आध्यात्मिक प्रगति संभव नहीं है। यदि जीवन की छोटी-छोटी कठिनाइयाँ आपको विचलित कर देती हैं, निन्दा, क्रोध, और चुगली आपके स्वभाव के अभिन्न अंग हैं तो समझ जाइए कि आपकी साधना ठीक नहीं है। जब आप प्रत्येक व्यक्ति के साथ सरलता से सामंजस्य बिठा पाते हैं, लोभ, ईर्ष्या तथा घृणा से एक हद तक मुक्त हो पाते हैं, तभी आप समझिए कि आपकी आध्यात्मिक प्रगति हो रही है। एक योग्य साधक के जीवन में एक सद्गुरु स्वयं ही आ जाते हैं।

21. वैराग्य आखिर क्यों ?

गृहस्थाश्रम में थोड़ा सा भी आन्तरिक वैराग्य व्यक्ति को सरलता से असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता का उपहार प्रदान कर सकता है। अधिकांश व्यक्तियों की प्रवृत्ति (मानसिकता) अपने और अपने परिवार के लिए बढ़िया से बढ़िया भोजन, वस्त्र, धन प्राप्त करने पर केन्द्रित रहती है। इन सुख -उपभोग के साधनों को एकत्र करने की होड़ में व्यक्ति

अपने चारों ओर देखना ही भूल जाता है। सड़क पर पड़े हुए, तड़पते हुए भिखारी का इलाज करवाने की किसको फिक्र है ? क्या हम अपने पास एकत्रित ढेरों बर्तनों, कपड़ों में से कुछ जरुरतमंद, अनजान व्यक्तियों को दे पाते हैं ? क्या अपने और अपने परिवार के लिए नए वस्त्र खरीदते हुए हमें किसी गरीब बच्चे का ख्याल आता है ?

जब हम अपनी वासनाओं, तृष्णाओं, इच्छाओं को विवेक की आरी से दृढ़ता पूर्वक काटना आरम्भ करते हैं तो स्वत: शनै: शनै: हम अपने अन्दर से जुड़ने की कला का विकास कर सकते हैं। कम वस्त्रों, विषय- भोग के पदार्थों के साथ जीने से हमारी ऊर्जा की भी बहुत अधिक बचत होती है। जब मैंने अपनी समस्त साड़ियों को (दिल कड़ा कर के) जरूरतमंदों में बाँटा तो मैं उनकी अनावश्यक देखभाल करने से सहज ही बच गई। उस बची हुई ऊर्जा का उपयोग मैं सेवा में कर रही हूँ। देना शुरू में निम्न मन के कारण कठिन अवश्य लगता है, परन्तु ईश्वर कृपा (सुख, शान्ति के रूप में) के अनेक उपहार हमें सहज ही इस पथ का पथिक बना देते हैं।

22. साधना में गलतियाँ

मन की चंचलता साधना में गलती करने का प्रमुख कारण है। एकाग्र मन सजग होता है और सजगता के द्वारा व्यक्ति सदैव सही समय पर सही निर्णय लेते हुए सही कार्य कर पाता है। जीवन में प्रत्येक व्यक्ति गलती करता है। परन्तु अनेक व्यक्ति उस गलती को वर्षों तक बोझ की भाँति अपने कंधों पर लादे रखते हैं। वह अपराध बोध न केवल व्यक्ति की नैसर्गिक प्रतिभा को कुंठित कर देता है अपितु जीवन में उसे आगे बढ़ने से भी सतत रोकता है। गलती इन्सान से ही होती है कोई भी दोष रहित (perfect) नहीं होता, ऐसा सोच कर प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं को माफ कर देना चाहिए। और न केवल माफ कर देना चाहिए अपितु अपनी गलतियों से सबक सीखते हुए जीवन में उन्हें दोबारा न करने का संकल्प लेना चाहिए।

क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष आदि सूक्ष्म रूप में प्रत्येक व्यक्ति के अन्त:करण में उपस्थित रहते हैं। साधारण व्यवहार में मन की ये अवांछित वृत्तियाँ व्यक्ति को अक्सर मुसीबत में डालने के लिए जिम्मेवार होती हैं। भोजन तथा वाणी का असंयम भी अप्रिय परिणाम लाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति कहीं न कहीं अन्दर से मन की शान्ति और सुख का सतत प्रवाह चाहता है। आत्मनिरीक्षण के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रश्न तालिका बना सकता है और स्वयं को सचेत कर सकता है। उदाहरणतया यदि आपको बहुत क्रोध आता है तो आप क्रोध के कारणों को जानने का प्रयास करिए। क्या आज मैं क्रोध से बच सकता था ? क्रोध से मुझे क्या -क्या हानियाँ हुई हैं ? क्या प्यार से कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता था ? प्रतिदिन ऐसे प्रश्नों के उत्तर लिखने से हमारा उच्च मन जाग्रत हो जाता है। स्वयं को हम उसी समय निर्देश दे सकते हैं- अगली बार जब ऐसी परिस्थिति होगी तो मैं अपने व्यवहार पर नियन्त्रण का अंकुश लगाऊँगा।

परमगुरु स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - आपकी आध्यात्मिक डायरी आपकी गुरु है। यह आपकी गलतियाँ आपको बताती है और उन्हें सुधारने में आपकी मदद करती है। प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर

उच्च तथा निम्न मन होते हैं। नियमित आत्मनिरीक्षण के द्वारा उच्च मन शक्तिशाली हो जाता है। उन्होंने तो यहाँ तक लिखा है कि यदि आप अपनी प्रगति द्रुत गति से करना चाहते हो तो दिन में प्रत्येक घंटे के पश्चात् अपनी डायरी लिखो। डायरी लिखने में आलस्य प्रत्येक साधक का सबसे बड़ा दुशमन है। अनेक व्यक्ति ईमानदारी से अपनी गलतियों को स्वीकार तथा लिपिबद्ध भी नहीं कर पाते हैं। स्वामी निरंजन ने लिखा है - मानसिक रूप से दिन भर की गतिविधियों का अवलोकन करो। दिन भर में आपको जो लगता है आपने गलत किया है, उसी समय अपने मन को निर्देश दो - अगली बार जब ऐसी परिस्थिति होगी तो मैं यह गलती नहीं करूँगा।

23. धन और साधना

आदिशंकराचार्य विरचित मोहमुद्गर में ' मूढ़ जहीहि धनागमतृष्णां' का अर्थ मुझे समझ आता है कि बुद्धिविहीन व्यक्तियों को धन अधिकाधिक प्राप्त करने की इच्छा रहती है। कलियुग अर्थ प्रधान युग है। अत: धन आज संन्यासियों की भी एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। परमार्थ के अधिकांश कार्य धन के बिना संभव नहीं हैं। जैसे-जैसे कलियुग का प्रकोप बढ़ रहा है, वैसे-वैसे लोगों की दान-वृत्ति भी कम हो रही है। परन्तु यहाँ यह लिखना भी उचित होगा कि धोखेबाज, छली और कपटी साधु-सन्तों की बढ़ती हुई संख्या के कारण प्रत्येक गृहस्थ दान देने से पहले दस बार सोचता है।

अपने जीवन के अनुभवों से मैं समझती हूँ कि जब तक धन का प्रयोग अपनी निजी आवश्यकताओं के साथ-साथ परमार्थ के लिए किया जाता है तो वह सार्थक होता है। शास्त्रों में लिखा गया है प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आय का 10% भाग दान करना चाहिए। परन्तु आज के युग में विरले व्यक्ति ही ऐसा कर पाते हैं। अत: धन जनित अनावश्यक तृष्णाओं से बचने के लिए व्यक्ति स्वयं ही अपनी रूचि के अनुरूप कोई परमार्थ का कार्य चुन सकता है। उदाहरणतया किसी निर्धन छात्र/छात्रा के लिए पुस्तकें अथवा यूनिफार्म खरीदना अथवा वृद्धों, निराश्रितों को भोजन तथा वस्त्र दान करना आदि। 'दो और देते रहो, प्रचुरता में प्राप्त करने का यही रहस्य है।'- स्वामी शिवानन्द।

24. साधना का मार्ग कठिन क्यों ?

इस मनुष्य देह में जन्म लेने के कारण मानव अपने अनन्त आत्मस्वरूप को छोड़ कर शरीर में बँध जाता है। जैसे -जैसे वह बड़ा होता है अपने आस-पास के वातावरण से विभिन्न सम्बन्ध (माता-पिता अथवा भाई-बहन आदि) बनाता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ संसार की वस्तुओं से आकर्षण और आसक्ति बढ़ती जाती है। यही माया है जो व्यक्ति को संसार से अधिकाधिक बाँधती जाती है। व्यक्ति अपने आत्मस्वरूप को पूर्णतया भूल जाता है और संसार को ही अपना असली घर समझने लगता है।

प्रारब्धवश जब व्यक्ति के जीवन की परिस्थितियाँ परिवर्तित होती हैं तो वह संसार की माया के प्रति सजग बनता है। जब रोग अथवा शोक व्यक्ति को झंझोड़ता है तब वह साधना की ओर

उन्मुख होता है। जिस प्रकार पहाड़ की चढ़ाई सदैव उतराई से कठिन होती है उसी प्रकार संसार की माया से विमुख होना अतिशय कठिन होता है। निचली मंजिल से ऊपर की मंजिल पर पानी चढ़ाने के लिए बिजली के पंप की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार संसार के प्रलोभनों को ठुकराने के लिए व्यक्ति को एक सशक्त विधि (साधना) की आवश्यकता होती है।

योग के विभिन्न अभ्यासों को जब नियमित रूप से श्वास की सजगता के साथ किया जाता है तो व्यक्ति संसार की माया के बंधनों और उनके दु:खद परिणामों के प्रति सजग बनता है। अपने अन्दर के प्रकाश की क्षणिक झलक व्यक्ति को एक अनिवर्चनीय सुख, शान्ति और आनन्द से ओत-प्रोत कर देती है। यही वह बिंदु है जिससे व्यक्ति यह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि उसके अन्त:करण में भी एक अलग संसार है। ईश्वर कृपा के फलस्वरूप व्यक्ति के जीवन में उचित समय पर एक समर्थ गुरु स्वयं ही आ जाते हैं। जो व्यक्ति सच्चाई, ईमानदारी और अच्छाई के मार्ग पर चलता है, वह सहज ही ईश्वर की कृपा प्राप्त करता है। आरंभ में साधना का पथ कठिन अवश्य लगता है क्योंकि यह नदी के विपरीत बहाव में नाव चलाने के समान ही होता है; परन्तु इस राह पर चलते-चलते प्रभु कृपा के अनेक दिव्य उपहार व्यक्ति की झोली अतिन्द्रिय अनुभवों के फूलों से भर देते हैं।

25. साधना में व्यवधान

संसार में रहते हुए व्यक्ति को अनेक सामाजिक कर्तव्यों तथा जिम्मेदारियों का निर्वाह करना आवश्यक होता है। कभी कोई मेहमान आ जाता है तो कभी व्यक्ति को स्वयं बाहर (दूसरे शहर अथवा देश में) जाना पड़ता है। विवाहोत्सव तथा अन्य पार्टियों में जाने से भी रात को सोना देर से होता है। मन में तरह-तरह के नए विचार रोपित होते हैं, विभिन्न आकर्षण व्यक्ति के मन को सतत उद्वेलित करते हैं। साधना के समय नूतन इच्छाएँ तथा विचार बार-बार मन के भटकने का मुख्य कारण बनते हैं। अधिकाँश साधकों की यही व्यथा उन्हें बार-बार साधना में पीछे धकेल देती है।

स्वामी चिदानन्द ने लिखा है - जिस प्रकार सब प्रकार के वस्त्रों में सामान्य आधार सूत होता है, सब प्रकार के फर्नीचर (कुर्सी, मेज, सोफा आदि) में सामान्य आधार लकड़ी होती है, उसी प्रकार सब मानवों, जीवों में सामान्य आधार वह परमतत्व है। अत: व्यक्ति को प्रत्येक परिस्थिति में प्रत्येक मानव में सतत उस परमात्म तत्व का ही चिंतन तथा दर्शन करने का प्रयास करना चाहिए। यहाँ यह बिंदु भी विचारणीय है कि सजगता के अभाव में साधक का मन बार-बार न केवल विषय -भोगों से आकर्षित होता है आपितु उन को प्राप्त करने के लिए लालायित भी होता है। स्वामी निरंजन ने लिखा है - यह संसार एक होटल है जिसका मैनेजर मनीराम (धन) है। तृष्णाएँ तथा इच्छाएँ वेश्याओं की भाँति प्रत्येक व्यक्ति को अपने जाल में जकड़े रखती हैं। ईर्ष्या, अंहकार, क्रोध, अभिमान, लोभ, आसक्ति आदि व्यक्ति के मित्र बन कर उसको अन्तत: दु:ख का उपहार प्रदान करते हैं। अत: प्रत्येक व्यक्ति को सजगता के द्वारा अपने अन्त:करण में छिपे हुए

इन लुभावने शत्रुओं से सावधान रहना चाहिए। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है - मैं सब प्राणियों के हृदय में स्थित हूँ। अत: समस्त प्राणियों में उस ईश्वर का दर्शन करने का प्रयास करते हुए, प्रत्येक विपरीत परिस्थिति में भी व्यक्ति साधना कर सकता है और अपने मन पर पड़ने वाले प्रभावों को न्यूनतम कर सकता है।

26. टी.वी. तथा समाचार पत्र

'टी.वी. को यदि टी.बी. कहा जाए तो अतिश्योक्ति न होगी। टी.वी. भारतीय संस्कृति का हनन ही तो कर रहा है'- स्वामी सत्यानंद। टी.वी. आज हमारे जीवन का मुख्य अंग है। अनेक व्यक्तियों के लिए यह समय बिताने का प्रमुख साधन है। स्वामी सत्यानन्द ने लिखा है - टी.वी. से दिमाग की नसें कमजोर होती हैं। गुरु जी की यह शिक्षा पढ़ कर मैं सोचती हूँ, मनन-चिन्तन करती हूँ - दिमाग की नसें कमजोर होने से विवेक की जागृति कैसे होगी ? परमगुरु स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - साधक की स्मरण शक्ति अच्छी होनी चाहिए अन्यथा वह ईश्वर को कैसे याद रख पाएगा ?

हत्या, चोरी, बलात्कार, धोखाधड़ी के सनसनीखेज समाचार व्यक्ति को नकारात्मकता के साथ-साथ भय और निराशा का उपहार प्रदान करते हैं। सुबह उठकर अनेक व्यक्ति सर्वप्रथम चाय के कप के साथ समाचार पत्र के द्वारा इन्हीं विचारों का भोजन प्रतिदिन ग्रहण करते हैं। रात को सोने से पूर्व भी अनेक घरों में टी.वी. देखा जाता है। विभिन्न सनसनीखेज समाचारों को दूरदर्शन वाले विज्ञापनों के साथ ऐसे आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि साधना करते हुए भी व्यक्ति का मन मोहित हो जाता है और वह अपना बहुमूल्य समय व्यर्थ गँवा बैठता है।

इन समाचारों का चिंतन रात भर मन को मथता रहता है और भविष्य की भयावह कल्पना को लेकर व्यक्ति डरावने स्वप्न देखता है। युवावस्था में अनेक तरुण अश्लील चलचित्र देखकर पथभ्रष्ट भी होते हैं। रात को सोने से पूर्व तथा सुबह उठकर मन को सर्वप्रथम अच्छे विचारों/ मन्त्रों/ ईश्वर नाम स्मरण का भोजन प्रदान करना चाहिए। टी.वी. और समाचार पत्र से बचे हुए समय का उपयोग हम स्वाध्याय तथा परोपकार के कार्यों में कर सकते हैं।

27. मेरा निम्न मन !

मेरा निम्न मन मुझे बार-बार साधना के पथ से हटाता है।

मेरा निम्न मन मुझसे बार-बार सवाल करता है - आखिर इस नि:स्वार्थ सेवा से तुम्हें क्या मिल रहा है ?

मेरा निम्न मन मुझे बार-बार काम (इच्छा), क्रोध और लोभ के गर्त में ढकेलता है।

प्रस्तुत करता है आकर्षक रूप में संसार के विषय भोगों को और अन्तर्निहित वासनाओं की अग्नि में घी का काम करता है।

रोक देता है अनेक बार यह मुझे अच्छे भलाई के कार्य करने से। कभी लोक-लाज, तो कभी धन अथवा समय का अभाव दर्शाता है।

चूक जाने पर अवसर सेवा का, बाद में बहुत पछताती हूँ मैं।
"अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत" वाली कहावत उस समय जीवन में सत्य चरितार्थ होती है।
खींचता है मुझे सत्व से रजस और तमस की ओर।
प्रदान करता है उपहार चंचलता, चिन्ता, परेशानी और दु:ख का।
सहज संतोषी मन दौड़ता है अनगिनत अपूर्ण इच्छाओं के पीछे।
करती हूँ प्रार्थना ईश्वर तथा गुरु से और प्राप्त करती हूँ सम्बल उनका।
जुड़ती हूँ अपने अन्दर स्थित परमपिता परमेश्वर से और अपनी इच्छा शक्ति जगाती हूँ।
प्राप्त करती हूँ असीम कृपा उस परमपिता की ऊर्जा तथा शक्ति के रूप में। गुरु जी की वाणी का सतत स्मरण करते हुए नि:स्वार्थ सेवा करने का सफल प्रयास करती हूँ।
प्राप्त करती हूँ असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता अपने इस प्रयास में।
तब समझ जाती हूँ कि परमार्थ में ही स्वार्थ है, सेवा से ही मेवा मिलता है।
साधना के इस पथ पर चलते-चलते, विभिन्न योगासनों, प्राणायामों और ध्यान के अभ्यासों को नियमित रूप से करते -करते अब समझ पाती हूँ अपने निम्न मन को।
करती हूँ सतत प्रयास सेवा द्वारा अपने उच्च मन की शक्ति को बढ़ाने का।

28. साधना द्वारा शुद्धिकरण

हम प्रतिदिन स्नान द्वारा अपने शरीर की सफाई करते हैं। साबुन के द्वारा कपड़े धोते हैं और साफ सुथरे कपड़े पहनते हैं परन्तु क्या कभी हम अपने मन के विषय में सोचते हैं ? मन में निरन्तर ईर्ष्या, द्वेष, गलतफहमियों के विचार एकत्रित होते रहते हैं। अनेक आधारहीन भय, कुंठाएँ और निराशाएँ भी मन में अपना स्थायी निवास बना कर रहती हैं। मन का यही संग्रह हमें अपने अन्दर स्थित ईश्वर से सम्पर्क करने से रोकता है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है - मृत्यु के पश्चात् व्यक्ति अपने मन में संग्रहीत कर्मों, विचारों की गठरी, आत्मा के साथ लेकर दूसरे नए शरीर में जन्म लेता है। यही कारण है कि कई व्यक्ति बाल्यावस्था से ही संन्यास अथवा अध्यात्म की ओर उन्मुख हो जाते हैं। उदाहरणतया आदिशंकराचार्य ने आठ वर्ष की अत्यायु में ही संन्यास ग्रहण कर लिया था।

जब हम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा तथा ध्यान के अभ्यासों को नियमित रूप से करते हैं, तो अपने मन के निहित संस्कारों के प्रति सजग बनते हैं। योग में इन विचारों को द्रष्टा भाव से एक बाहर वाले व्यक्ति की भाँति देखते जाने का निर्देश दिया जाता है। इस विधि का अनुसरण करने से धीरे-धीरे संचित संस्कारों, विचारों का उन्मूलन हो जाता है। इस पथ पर चलते-चलते व्यक्ति नए विचारों, संस्कारों को संचित न करने की कला का विकास भी धीरे-धीरे कर पाता है। अत: योगसाधना के द्वारा अन्त:करण का वृहद रूप से शुद्धिकरण संभव है। अपने अन्दर के अनुभव ही व्यक्ति के वास्तविक पथ प्रदर्शक बनते हैं। जीवन का प्रत्येक संघर्ष व्यक्ति

को अपने अन्दर स्थित परमात्म तत्व से अधिकाधिक जुड़ने के लिए प्रेरित करता है। एक शुद्ध अन्त:करण में न केवल परमात्म तत्व की सहज अनुभूति संभव है अपितु जन्मों की संचित निराशाओं, कुंठाओं और भय जनित वृत्तियों का निराकरण सरलता से हो जाता है। परमार्थ ही ऐसे अन्त:करण का सहज स्वभाव बन जाता है।

29. साधना में प्रगति का मापदण्ड

गृहस्थाश्रम में रहते हुए, प्रत्यक्ष गुरु के अभाव में अनेक बार साधना करते हुए व्यक्ति भटक जाता है। साधना में प्रगति अनेक व्यक्ति अधिक कर्मकांड, पूजा-पाठ आदि से अनुमानित करते हैं। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है -यदि साधना करते-करते मन में अद्भुत शान्ति का प्रादुर्भाव हो, मन संसार के प्रपञ्चों में तटस्थ रहने लगे तो उसे ही आप अपनी प्रगति मानिए। साधना के द्वारा मन शान्त तथा सन्तुलित हो जाता है। सांसारिक घटनाएँ तथा विषम परिस्थितियाँ आपके अन्दर प्रतिक्रियाएँ करना बन्द कर देती हैं। लोक हित को आप अपने जीवन में प्रथम स्थान देने लगते हैं। साधना करने के लिए आप सतत उत्साहित तथा जागरुक रहते हैं।

शुद्धता तथा सच्चरित्रता को आचरण में व्यावहारित करना, लिखने अथवा भाषण करने से अधिक महत्वपूर्ण है। प्रत्येक व्यक्ति अपने घर को ही साधना क्षेत्र बना सकता है। यदि आप वस्तुओं का संग्रह करना कम कर देते हैं और अधिकाधिक दान (जरुरतमंदों को) देने के लिए उद्यत रहते हैं, तो उसे भी अपनी साधना की प्रगति का एक महत्वपूर्ण प्रभाव मानिए। संसार में रहते हुए जब हम विषय भोगों की नश्वरता को समझने लगते हैं तो सहज ही अपनी इच्छाओं को कम कर पाते हैं। नई गाड़ी, मोबाइल, टी.वी. आदि का आकर्षण होने पर भी मन के घोड़े पर लगाम लगा पाते हैं।

साधना के पथ पर चलते-चलते व्यक्ति संतोष के धन का स्वामी बनता है। जो कुछ भी उसके पास है, वह उसे दूसरों के साथ बाँटता है। उस व्यक्ति का हृदय दूसरों के दुखों से द्रवित हो जाता है और वह यथासंभव उनकी सहायता करने का प्रयास करता है। वह जानता है कि अनावश्यक संग्रह उसे केवल दु:ख का उपहार ही प्रदान कर सकता है। निर्धनों, निराश्रितों और अनाथों को प्यार करते हुए उसका जीवन एक अद्वितीय सुख, शान्ति और प्रसन्नता से परिपूर्ण हो जाता है। यह साधना का अन्तरंग प्रभाव है, अत: संसार में रहते हुए, प्रत्येक साधक स्वयं से प्रतिदिन यह प्रश्न पूछ सकता है - क्या आज मैंने बिना किसी अपेक्षा के किसी की मदद की ? अपने परिवार के सदस्यों के साथ-साथ दूसरों की मदद करने से प्रगति द्रुत गति से होती है। वह ईश्वर अन्तर्यामी है, वह हमारे प्रत्येक विचार तथा कार्य को देख रहा है, यह भाव दृढ़ करने से व्यक्ति शीघ्र ही सन्मार्ग पर न केवल स्वयं प्रगति कर पाता है अपितु अपने व्यवहार से दूसरों को भी प्रेरित करता है। विपरीत परिस्थितियों में ऐसे व्यक्ति को अनजाने लोग बिना माँगे मदद करते हैं। धीरे-धीरे उसकी इच्छा-शक्ति बढ़ जाती है और वह संसार के कीचड़ में (शारीरिक रोगों के रहते हुए भी) कमल की भाँति खिल उठता है।

30. वास्तविक गुरु दक्षिणा

अनेक शिष्य सोचते हैं कि गुरु को रूपये देने से उनका दक्षिणा देने का कर्तव्य पूर्ण हो जाता है। अन्य शिष्य सोचते हैं कि गुरु को माला अर्पण करने अथवा गुरु के दर्शन करने से उनको प्रसन्न किया जा सकता है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - गुरु की आज्ञा मानना गुरु को माल्यार्पण करने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। स्वामी चिदानन्द ने लिखा है - गुरु की शिक्षाओं को अपने जीवन में व्यावहारित करना ही वास्तविक गुरु दक्षिणा है। गुरु अपने उस शिष्य से सर्वाधिक प्रसन्न होते हैं जो अपने व्यवहार में शिक्षाओं को न केवल व्यावहारित करता है अपितु अपने व्यवहार से अनेक व्यक्तियों को आत्मोत्थान के लिए प्रेरित करता है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - ऐसा एक शिष्य दस हजार शिष्यों से भी अधिक महत्वपूर्ण होता है।

भिलाई में रहते हुए मैं देखती हूँ, सुनती हूँ अनेक शिष्य बार-बार गुरु जी के दर्शन प्राप्त करने के लिए मुंगेर जाते हैं / जाने की होड़ लगाए रखते हैं ; गुरु जी की शिक्षाओं का मनन चिन्तन करते हुए मैं सोचती हूँ क्या वे उनकी शिक्षाओं को व्यावहारित कर रहे हैं ? दूसरों की मदद आत्मभाव से करना उनके लिए एक कठिन कार्य हो जाता है। एक शिष्य से जब मुझे मदद की आवश्यकता थी तो मैं किसी भी प्रकार से उनसे सम्पर्क ही नहीं कर सकी थी क्योंकि फोन तो वे उठाएँगे ही नहीं! साधना के इस पथ पर चलते हुए साधक/शिष्य/गृहस्थ चाहे कितना भी पूजा-पाठ, मन्त्र जप कर ले, यदि वह अपने अन्दर छिपे हुए छल-कपट, काम, क्रोध, अंहकार, स्वार्थ, ईर्ष्या आदि को धीरे-धीरे कम करने के लिए उद्यत नहीं होता तो उसे गुरु कृपा न्यूनतम ही मिलती है।

एक सद्गुरु अन्तर्यामी होता है, वह हमारे मन को एक खुली किताब की भाँति पढ़ सकता है। अत: साधना में प्रगति के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को इस तथ्य का गहराई से मनन-चिन्तन करना चाहिए और अपने व्यक्तित्व को अन्दर से धवल तथा निर्मल बनाने पर जोर देना चाहिए। जो व्यक्ति जहाँ रहता है उसे उस वातावरण में पूर्ण सामंजस्य बिठाते हुए प्रत्येक के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिए और यथासंभव दूसरों की मदद करने के लिए उद्यत रहना चाहिए। अपने आत्मोत्थान के लिए यह अत्यावश्यक है और मैं समझती हूँ कि यही वास्तविक गुरु दक्षिणा भी है।

31. आध्यात्मिक अनुभव

साधना के पथ पर जो साधक पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ अनवरत चलते हैं, अनेक अतिन्द्रिय अनुभव उनकी दिव्य संपत्ति बनते हैं। स्वामी सत्यानन्द ने लिखा है - साधक को इन अनुभवों को अपने हृदय कोष में सुरक्षित रख लेना चाहिए। विपरीत परिस्थितियों में जब साधक की श्रद्धा डगमगाने लगती है, धैर्य का बाँध टूटने वाला होता है, तब ये अनुभव उसे सम्बल प्रदान करते हैं। जिस प्रकार हम सब बाहर की दुनिया देखते हैं उसी प्रकार हम सबके अन्दर भी एक दुनिया है जहाँ झूठ, छल-कपट और धोखा पूर्णतया निषिद्ध हैं। जब अपने अन्दर के अनुभवों से साधक उस आन्तरिक दुनिया की क्षणिक झलक प्राप्त कर लेता है तो उस का तन-मन एक

अद्वितीय, अनिवर्चनीय, अकथनीय आनन्द से आप्लावित हो जाता है।

जहाँ ये अनुभव साधक का मनोबल, श्रद्धा और विश्वास बढ़ाते हैं, वहाँ आरम्भ में ये उसे अंहकार से भी भर देते हैं। अंहकार ईश्वर और मानव के बीच सबसे ठोस दीवार है। साधक को अहंकार से बचाने के लिए अपने अनुभवों को दूसरों को बताने के लिए मना किया जाता है। अनेक बार अज्ञानी व्यक्ति इन्हें मानसिक विक्षेप भी समझ लेते हैं और व्यक्ति को रोगी समझते हुए मनोवैज्ञानिक चिकित्सक के पास भी ले जाते हैं। अनेक व्यक्ति अज्ञानता में इन अनुभवों को प्राप्त करने के लिए पागल हो जाते हैं। पाश्चात्य देशों में एल. एस.डी. आदि अनेक मादक पदार्थ (drugs)अतिन्द्रिय अनुभव प्राप्त करने के लिए अनेक व्यक्ति खाते हैं। विदेशों में इन दवाओं के दुष्प्रभावों से अनेक व्यक्ति मानसिक अस्पतालों में पड़े हैं। अनेक सन्तों ने लिखा है - साधना में प्रकाश दिखना अथवा विभिन्न प्रकार के चित्र दिखना बहुत साधारण बात है। साधक को उनसे अप्रभावित रहने का प्रयास करना चाहिए अन्यथा उसकी आध्यात्मिक प्रगति रूक सकती है।

अपने अनुभवों से मैं समझती हूँ कि साधक को अपनी इस अन्तर्यात्रा की बागडोर सद्गुरु अथवा ईश्वर (जिसमें भी उसकी आस्था हो) को सौंप देनी चाहिए। साधक को स्वयं अनुभवों से अप्रभावित रहने का प्रयास करते हुए साधना को पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ नियमित रूप से निश्चित समय पर प्रतिदिन करना चाहिए। यदि साधक को कोई गुरु मिल जाए तो बहुत अच्छा है अन्यथा पुस्तकों से पढ़ कर उसे केवल सरल साधनाएँ ही करनी चाहिए। उच्च साधनाओं को बिना उचित निर्देशन के करने से अनेक बार लाभ की बजाय हानि हो सकती है। अपने अनुभवों को एक डायरी में लिखने से साधक को अपने अन्दर स्थित गुरु से न केवल निर्देश मिलने लगता है अपितु अपनी गलतियों का, अवगुणों का पता भी चलने लगता है।

32. संसार में रहते हुए मोक्ष ?

मन एक शक्ति है। इस शक्ति का सम्बन्ध जब उच्च सत्ता (परमात्मा) से प्रगाढ़ होता जाता है तो यह मोक्ष का कारण बनती है। मोक्ष प्राप्ति की इस राह में व्यक्ति को असीम सुख, शान्ति और प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। मोक्ष आखिर क्या है ? मोक्ष का अर्थ है सब प्रकार की चिन्ताओं से पूर्ण मुक्ति। श्री श्री रविशंकर से जब किसी ने मोक्ष का अर्थ पूछा तो उन्होंने कहा -एक छोटा बच्चा अपनी वार्षिक परीक्षा समाप्त होने के पश्चात् स्वयं को पूर्णतया स्वतंत्र मानता है और उस काल (कुछ दिन अथवा माह) को खेलने-कूदने में व्यतीत करता है। उसी प्रकार जब सारी चिन्ताएँ, दुविधाएँ और भय समाप्त हो जाते हैं तो व्यक्ति स्वयं को पूर्णतया स्वतंत्र तथा मुक्त मानता है। यही मोक्ष है। स्वामी निरंजन ने भी अपने सत्संग में कहा- हमें मोक्ष की क्या आवश्यकता है ? मोक्ष की आवश्यकता तो तुम लोगों को है जो सारा समय व्यर्थ की चिन्ताओं, निर्मूल आशंकाओं और कल्पित भय में डूबे रहते हो।

मैं सोचती हूँ, मनन-चिन्तन करती हूँ आखिर क्यों व्यक्ति संसार में इतना अधिक लिप्त हो

जाता है कि स्वयं के असली अस्तित्व को ही भूल जाता है ? क्यों व्यक्ति स्वार्थ में इतना अन्धा हो जाता है कि उसे अपने और अपने परिवार के सिवाय कुछ दिखता ही नहीं है ? संसार में रहते हुए व्यक्ति चिन्ता मुक्त होने की कल्पना भी नहीं कर पाता है। ईश्वर आराधना (सच्चे मन से) तथा साधना का मार्ग एक ऐसा मार्ग है जिस पर चलते हुए व्यक्ति अपने स्व से जुड़ने की कला का विकास करता है। आरम्भ में यह मार्ग थोड़ा सा कठिन लगता है परन्तु इस राह पर चलते हुए व्यक्ति को ईश्वर कृपा के अनेक दिव्य उपहार प्राप्त होते हैं। इन दिव्य उपहारों से व्यक्ति का तन-मन एक नूतन आनन्द से सराबोर हो जाता है और वह संसारी विषय भोग के पदार्थों की निरर्थकता को समझने लगता है। उसके जीवन की दिशा स्वार्थ से परमार्थ की ओर मुड़ जाती है और उसका संपूर्ण व्यक्तित्व 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओत प्रोत हो जाता है। यही वह बिंदु है जहाँ से वह चिंता मुक्त, इच्छा मुक्त होने की यात्रा प्रारम्भ करता है।

33. ध्यान द्वारा जीवन में स्वतन्त्रता

जब व्यक्ति ध्यान करता है तो उसे शनै:, शनै: गहन सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है। ध्यान का जब नियमित रूप से अभ्यास किया जाता है तो व्यक्ति न केवल अनेक अतीन्द्रिय अनुभवों को अपनी झोली में समेटता है अपितु उसका अपने अन्दर दबे हुए संचित अनेक जन्मों के संस्कारों से भी साक्षात्कार होता है। ये संस्कार कभी-कभी डरावने प्रतिबिम्बों अथवा चेहरों के रूप में भी प्रकट होते हैं। उपयुक्त मार्गदर्शन के अभाव में व्यक्ति न केवल ध्यान करना छोड़ देता है अपितु भयभीत होते हुए अनेक नए संस्कारों, कुंठाओं और निराशाओं को पोषित करता है। मेरी एक सखी ध्यान के आरम्भिक दिनों में अनेक कठिनाइयों से गुजरी थी। यहाँ तक कि घर के लोग उसे पागल समझने लगे थे। उसके पति उसे मनोचिकित्सक के पास ले जाने वाले थे। परन्तु उसका भाग्य अच्छा था कि वहाँ जाने से पूर्व वे एक ऐसी स्त्री रोग विशेषज्ञ के पास गए जिन्हें ध्यान के विभिन्न पड़ावों का भली प्रकार ज्ञान था। अत: उन्होंने उस दम्पत्ति को उचित मार्गदर्शन दिया।

ध्यान के द्वारा व्यक्ति न केवल ध्यान करते समय सुख- शान्ति अनुभव करे अपितु शेष समय भी ध्यान का प्रभाव दृष्टिगोचर होना चाहिए। आधा अथवा एक घण्टा ध्यान का नियमित अभ्यास करने के बाद यदि व्यक्ति घर अथवा कार्यालय में अन्य व्यक्तियों से अपने सम्बन्ध मधुर नहीं बना पाता है तो उसे अवश्य ही मनन- चिन्तन करना चाहिए। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को युद्ध क्षेत्र में कठिनाइयों , कमजोरियों पर विजय प्राप्त करते हुए जीवन में अपना कर्तव्य निभाने का आदेश दिया था। संसार में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति यदि जीवन के उतार-चढ़ाव में अपना मनोबल बनाए रखता है तो वह अपने समस्त कर्तव्यों का क्षमतानुसार निर्वहन कर सकता है। यही सच्ची स्वतन्त्रता है जो व्यक्ति को हर पल हर परिस्थिति में आन्तरिक शान्ति प्रदान करते हुए गहन सुख और प्रसन्नता प्रदान करती है। अपने अन्दर स्थित ईश्वर तत्व का दिग्दर्शन व्यक्ति के अनेक भयों और भ्रमों का निराकरण

स्वत: ही कर देता है। इस मार्ग पर चलते-चलते जैसे-जैसे व्यक्ति के संचित संस्कारों का समूल विनाश होता है, वह एक दिव्य ईश्वरीय ऊर्जा का सतत अनुभव करता है। यहीं से आरम्भ होती है उसकी यात्रा डर से निडरता की ओर, पराधीनता से स्वाधीनता की ओर, दुख से सुख की ओर। ऐसा व्यक्ति जीवन की प्रत्येक कठिन परिस्थिति को ईश्वर का दिव्य उपहार मान कर चुनौती के रूप में स्वीकार करता है।

34. संसार एक होटल ?

अमेरिका के विभिन्न शहरों में घूमते हुए मैंने बारह दिनों में लगभग छ: होटल बदले। किसी होटल में एक रात रुकते थे तो किसी अन्य होटल में दो दिन रुके। प्रत्येक होटल के कक्ष में प्रवेश करते हुए, अपना सामान खोलते हुए, मन में सर्वोपरि यह बात बिल्कुल स्पष्ट रहती थी कि हमें कल अथवा परसों यहाँ से चले जाना है। यह आवास अस्थायी है और इसमें जो भी सामान प्रयोग के लिए सूटकेस से बाहर निकालना है, वापस रख देना है अन्यथा वह समान फिर यहीं छूट जाएगा। एक होटल से दूसरे होटल में समय बिताते हुए मुझे बार-बार ख्याल आता था -क्या यह संसार इसी प्रकार हमारा अस्थायी निवास स्थान नहीं है ? अनेक योनियों में जन्म लेकर हम यहाँ अपने कर्मों और इच्छाओं के अनुसार समय बिताते हैं और फिर चोला बदल कर किसी दूसरे स्थान पर जन्म ले लेते हैं। इस संसार को हम क्यों अपना स्थायी घर समझ लेते हैं ? क्यों इन सांसारिक सम्बन्धों से हम स्वयं को इतना अधिक बाँध लेते हैं ? क्यों नही हम समझ पाते कि ईश्वर का आवास ही हमारा स्थायी निवास स्थान है ? जिस प्रकार कुछ ही दिनों में हम एक होटल से दूसरे होटल में घूमते हुए थक गए थे और बेताबी से घर पहुँचना चाहते थे, उसी प्रकार संसार में भोग-विलासों को भोगते-भोगते जब हम थक जाते हैं, सुख और दु:ख के झूले में झूलते हुए त्रस्त हो जाते हैं, तो क्यों नहीं अपने वास्तविक एवं स्थायी निवास स्थान ईश्वर के घर जाने की चाहना करते ?

जिस दिन हमें समझ आ जाता है कि यह संसार भी एक होटल है, उस दिन हमारी खोज़ शुरू हो जाती है। खोज? कैसी खोज़ ? हमारे वास्तविक आवास स्थान की खोज। 'मैं कौन हूँ? मैं कहाँ से आई / आया हूँ' जैसे प्रश्न हमारे मन में गूँजने लगते हैं। 'मेरा इस पृथ्वी पर जन्म लेने का क्या प्रयोजन है ?' यह सवाल भी अनेक जिज्ञासुओं के मन को मथता रहता है। मुझे लगता है कि यहीं से आसक्ति और मोह के बंधन ढीले पड़ने लगते हैं। विश्व बंधुत्व की भावना पनपने लगती है और व्यक्ति संसार की निस्सारिता को समझते हुए दान, प्यार और सेवा के दिव्य गुणों को अपनाता है। प्रभु कृपा के फलस्वरूप नम्रता और करुणा से उसका हृदय आपूरित हो जाता है और वह दूसरे के दु:ख को अपना दु:ख समझ पाता है। नि:स्वार्थ सेवा उसके स्वभाव का एक सहज अंग बन जाती है। अपने अनुभवों से वह समझ जाता है कि जितनी अधिक सेवा वह करता है उतनी अधिक प्रभु कृपा उसे प्राप्त होती है, जितना अधिक दान वह देता है, उतना अधिक धन उसे प्राप्त होता है। नाम और यश तो स्वयं ही उसके पीछे-पीछे चलने लगते हैं।

35. सन् 2013 की गुरु पूर्णिमा

सन् 2011 गुरु पूर्णिमा में स्वामी निरंजन ने अष्टावक्र की कथा सुनाई। अष्टावक्र आठ अंगों से टेढ़ा था। जब वह माता के गर्भ में था तो उसके पिता मंत्रों का उच्चारण गलत कर रहे थे। वह माता के गर्भ में सुन रहा था, उसने वहीं से अपने पिता को उनकी गलती बताई। उसके पिता ने क्रोधित होकर उसे श्राप दे दिया - जा तू आठ अंगो से टेढ़ा हो जा। एक बार जब अष्टावक्र राजा जनक की सभा में पहुँचा तो वहाँ शास्त्रार्थ चल रहा था। अष्टावक्र को देखते ही अनेक विद्वान जोर-जोर से हँसने लगे। तब अष्टावक्र ने कहा- मैंने तो सोचा था कि ये विद्वानों की सभा है, पर यहाँ तो सारे चमार हैं जो इस शरीर की बनावट को देख कर प्रतिक्रिया कर रहे हैं। उसकी विद्वतापूर्ण बात सुनकर पूरी सभा में सन्नाटा छा गया था। स्वामी जी ने कहा - तुम भी यहाँ रिखिया गुरु पूर्णिमा में आकर हमारे पीछे-पीछे भागते रहते हो। चारों ओर गुरु जी (स्वामी सत्यानंद) की कृपा बहुतायत में प्रवाहित हो रही है, तुम स्वयं को उस ऊर्जा से जोड़ने का प्रयास ही नहीं करते।

सन् 2013 में मैं अमरीका के सियाटल शहर में गुरु जी के इस सत्संग को याद करते हुए स्वयं को उनके श्री चरणों से जोड़ने का अनथक प्रयास कर रही हूँ। मैं सोचती हूँ - यदि मैं गुरु पूर्णिमा के लिए मुंगेर नहीं जा सकी तो क्या हुआ, गुरु जी तो यहाँ आ सकते हैं। अत: मानसिक रूप से स्वयं को मुंगेर में रखने का सतत प्रयास कर रही हूँ। अपने इस प्रयास में संलग्न मन को दु:खी होने का समय ही नहीं, मिल रहा है। गुरु जी की आज्ञा का पालन करते हुए उनकी शिक्षाएँ जन-जन तक पहुँचाने का सतत प्रयास भी मुझे मानसिक रूप से उनसे जोड़े रखता है। अपने इस अनुभव से मैं समझ पाती हूँ कि जीवन में प्रत्येक परिस्थिति ईश्वर हमें हमारे उत्थान के लिए देता है। प्रतिकूल परिस्थितियों को यदि हम ईश्वरीय लीला समझ कर स्वीकार पाते हैं तो न केवल अपनी सहनशीलता को बढ़ाते हैं अपितु अधिक योग्य भी बन पाते हैं।

36. अटूट श्रद्धा और विश्वास

अटूट श्रद्धा और विश्वास ही साधना में सफलता प्राप्त करने की कुंजी है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - उच्चतर ज्ञान- कोई भी चिन्ता नहीं, ईश्वरीय योजना। स्वामी जी की इस शिक्षा को व्यावहारित करते हुए मेरा जीवन एक हद तक चिन्ता रहित हो पाया है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आस्था के अनुरूप अपनी श्रद्धा और विश्वास को दृढ़ कर सकता है। वह उच्च चेतना चाहे आपके गुरु हों अथवा कोई देवी-देवता , इस बात से कोई खास फर्क नहीं पड़ता है। श्रद्धा और विश्वास वे दैवी गुण हैं जो हमारी आन्तरिक ऊर्जा को जीवन के तूफानों में बिखरने से बचाए रखते हैं। स्वामी सत्यानन्द ने लिखा है - यदि शिष्य की श्रद्धा सच्ची है तो एक धोखेबाज़ गुरु भी उसे कोई हानि नहीं पहुँचा सकता है।

सन् 2004 में अपने आन्तरिक अनुभवों के फलस्वरूप जब मैंने गुरु जी की कृपा का रसास्वादन करना प्रारम्भ किया था तो अध्यात्म में आगे बढ़ने के लिए मैंने बिहार स्कूल ऑफ

योगा, मुंगेर पत्र लिखा था। वहाँ से मुझे एक संन्यासी का पत्र आया था - औपचारिक गुरु दक्षिणा के बिना ही आप स्वामी सत्यानन्द जी को अपना गुरु मान रही हैं। इस मार्ग में आगे बढ़ने के लिए एकलव्य जैसी निष्ठा होनी चाहिए। हर कोई एकलव्य तो नहीं बन सकता न ! आप यहाँ आ कर औपचारिक दीक्षा लीजिए। स्वास्थ्य खराब होने के कारण उस समय मैं मुंगेर जाने की स्थिति में नहीं थी। पत्र पढ़ कर कुछ दिन तो निराशा के भँवर पर डूबते -उतरते ही निकले थे। परन्तु गुरु कृपा के फलस्वरूप मैंने पूर्ण मनोयोग से जो भी समझ में आते थे, अपने अभ्यास जारी रखे थे। आज सन् 2014 में जब मैं समय के पन्ने पलटती हूँ, पीछे मुड़ कर देखती हूँ तो अपनी श्रद्धा और विश्वास को पहले से कई गुना अधिक दृढ़ पाती हूँ। ईश्वर/गुरु जी की कृपा ने पग-पग पर मेरी, अविश्वास के भँवर में डोलती नैया को अपने सशक्त हाथों में शुरू से सँभाला था।

37. जब मैंने ईश्वर से माँगा (स्वामी विवेकानन्द- अनुवदित)

जब मैंने ईश्वर से शक्ति माँगी तो उन्होंने मुझे जीवन में सामना करने के लिए कठिन परिस्थितियाँ दीं।

जब मैंने ईश्वर से प्रसन्नता माँगी तो उन्होंने मुझे कुछ दु:खी व्यक्तियों से मिलवाया।

जब मैंने ईश्वर से धन माँगा तो उन्होंने मुझे कड़ी मेहनत करना सिखाया।

जब मैंने ईश्वर से शाँति माँगी तो उन्होंने मुझे दूसरों को मदद करना सिखाया।

ईश्वर ने जो मैं चाहता था मुझे कुछ भी नहीं दिया। उन्होंने मुझे वह सब कुछ दिया जिसकी मुझे आवश्यकता थी।

स्वामी जी की यह कविता पढ़ कर मैं सोचती हूँ, मनन-चिन्तन करती हूँ कि कठिन परिस्थितियों का सामना किए बिना हमें जीवन में आन्तरिक शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती है। अत: कठिन परिस्थितियाँ आने पर यदि हम अपना दृष्टिकोण सकारात्मक रख पाते हैं तो सरलता से उनका सामना कर पाते हैं। दु:खी व्यक्तियों को देख कर ही हम अपने जीवन में ईश्वर प्रदत्त उपहारों की कद्र कर पाते हैं। अन्यथा यह इच्छा महारानी हमें सदैव उद्वेलित ही रखती हैं। जब हम बिना अपेक्षा के दूसरों की मदद करते हैं तो गहन आंतरिक शांति के साथ-साथ प्रभु -कृपा स्वत: ही हमें प्राप्त हो जाती है। अत: आवश्यक यह है कि हम शांति की खोज करना छोड़ कर अपने स्वार्थ को छोड़ें और यथासम्भव दूसरों की मदद करने पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करें।

स्वामी जी की इस कविता से यह भी पूर्णतया स्पष्ट होता है कि इच्छाएँ एक सन्त को भी आती हैं। परन्तु सन्त जानते हैं कि ईश्वर उनकी प्रत्येक आवश्यकता को अवश्यमेव पूरा करते हैं अत: वे इच्छा पूरी न होने से क्रोधित, उद्वेलित तथा व्यथित नहीं होते हैं।

38. मैंने अपने गुरु से माँगा (स्वामी निरंजन - अनुवादित)

शक्ति ताकि मैं उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकूँ, मुझे कमज़ोर बनाया गया ताकि मैं नम्रता से आज्ञा पालन कर सकूँ।

स्वास्थ्य ताकि मैं महान कार्य कर सकूँ, मुझे दु:ख और कमजोरी दी गई ताकि मैं पहले से बेहतर

कार्य कर सकूँ।
धन ताकि मैं प्रसन्न रह सकूँ, मुझे निर्धनता दी गई ताकि मैं बुद्धिमान बन सकूँ।
अधिकार ताकि मुझे दूसरों की प्रशंसा प्राप्त हो सके, मुझे कमज़ोरी दी गई ताकि मुझे ईश्वर की आवश्यकता का अनुभव हो।
मुझे वह कुछ भी नहीं मिला जो मैंने माँगा था, परन्तु मुझे वह सब कुछ मिला जिसकी मैंने आशा की थी।
सब व्यक्तियों में मुझे सर्वाधिक कृपा प्राप्त हुई है।

स्वामी जी की यह कविता पढ़ कर मैं सोचती हूँ, मनन- चिन्तन करती हूँ कि यदि ईश्वर ने मुझे रोग दिया तो उसका भी कोई कारण है। जीवन की इस राह में हम सब अनजाने में ही अनेक इच्छाओं को पोषित करते रहते हैं। जब ईश्वर हमारी इच्छाएँ पूरी नहीं करते तो हम दु:खी हो जाते हैं। अनेक व्यक्ति ईश्वर पर विश्वास करना ही छोड़ देते हैं। अन्य व्यक्ति ईश्वर से झगड़ा करते रहते हैं। कई व्यक्ति निराशा और विषाद के गर्त में ही गिर जाते हैं। कई व्यक्ति दुराचार का मार्ग चुन लेते हैं और कुसंगति में पड़ कर अपना जीवन व्यर्थ ही गँवा देते हैं।

अध्यात्म के इतने उच्च शिखर पर पहुँच कर भी यदि स्वामी जी के गुरु ने उनको वह सब कुछ नहीं दिया जो उन्होंने माँगा तो उसके पीछे भी गुरु जी की कृपा ही थी। इच्छाएँ तो अनवरत आती ही रहती हैं, हम सब को जीवन में सब कुछ सदैव अच्छा चाहिए। परन्तु यदि इच्छाएँ पूरी नहीं होती तो निराश अथवा हतोत्साहित होने की बजाय हमें उनके न मिलने का गहन भावार्थ समझने का प्रयास करना चाहिए। यही वास्तविक शरणागति है। जब हम पूरे मन से गुरु जी पर आश्रित हो जाते हैं और बिना अपनी बुद्धि लगाए उनकी आज्ञाओं का पालन करते हैं तो वे हमारी झोली अपने आशीर्वादों से भर देते हैं। गुरु जी के आशीर्वाद मिलने से संसार के काँटें भी फूलों में बदल जाते हैं।

39. यथा योग्यं तथा कुरु

इस वाक्य का अर्थ है - जैसा आप उचित समझें, वैसा करिए। सन् 2006 में स्वामी सत्यानंद के सत्संग में जब मैंने यह वाक्य सुना था तो मुझे बहुत अच्छा लगा था। स्वामी जी ने कहा था- यदि अयोध्या नरेश पुत्र प्राप्ति के लिए श्रृंगी ऋषि से यज्ञ न करवाते तो वे अपने पुत्र राम के वियोग में देह का त्याग न करते। जीवन में यदि हम अपनी इच्छाओं को ईश्वर के चरणों में समर्पित कर पाते हैं तो अनेक अनावश्यक दु:खों तथा परेशानियों से बच सकते हैं। गुरु जी के इस वाक्य को जब से मैंने साधना के रूप में व्यावहारित किया है, मुझे इसके अनेक लाभ प्राप्त हुए हैं। यद्यपि मेरा निम्न मन कभी-कभी माया के जाल में मुझे उलझा कर इस साधना से दूर कर देता है, तथापि नियमित योगाभ्यास, स्वाध्याय, मन्त्रजप, कीर्तन श्रवण के द्वारा मैं एक हद तक माया के खेल को समझ पाती हूँ। संसार में रहते हुए माया के प्रहारों से बचना आसान तो नहीं है!

40 . दैनन्दिनी साधना

परमहंस स्वामी निरंजन ने प्रत्येक व्यक्ति के लिए सुबह आँख खुलते ही बासी मुँह से बिस्तर पर बैठ कर इस सरल साधना को करने का प्रावधान दिया है। सुबह आँख खुलते ही हमारा मन अर्द्धचेतन अवस्था में रहता है। मन की उस अवस्था में लिए गए संकल्प का हमारे व्यक्तित्व पर अतिशय प्रभाव पड़ता है। आरम्भ में रात को सोने से पूर्व यदि हम अपने मन को निर्देश देते हैं तो सुबह आँख खुलते ही हमें यह साधना करनी याद रहती है।

1. अपने अच्छे स्वास्थ्य का संकल्प लेकर ग्यारह बार महामृत्युंजय मंत्र का जप करो।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारूकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

2. अपने जीवन में प्रतिभा और विवेक जागृति का संकल्प लेकर 11 बार गायत्री मंत्र का जाप करें।

ॐ भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यं। भर्गो देवस्य धीमहि धियो योन: प्रचोदयात्॥

3. अपने जीवन की दुर्दशा और दुर्गति को दूर करने तथा सुख, शांति और समृद्धि के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए दुर्गा जी के 32 नामों का (3 बार) जाप करें।

दुर्गा दुर्गार्तिशमनी दुर्गापद्विनिवारिणी। दुर्गमच्छेदिनी दुर्गसाधिनी दुर्गनाशिनी॥
दुर्गतोद्धारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा। दुर्गमज्ञानदा दुर्गदैत्यलोकदवानला॥
दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी। दुर्गमार्गप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता॥
दुर्गमज्ञानसंस्थाना दुर्गमध्यानभासिनी। दुर्गमोहा दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी॥
दुर्गमासुरसंहन्त्री दुर्गमायुधधारिणी। दुर्गमांगी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी॥
दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी।

अनेक व्यक्तियों ने इस सरल साधना को अपने जीवन का अभिन्न अंग बनाया है और उन्हें इसके आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। संन्यास पीठ, मुंगेर द्वारा प्रकाशित द्वैमासिक पत्रिका आवाहन में पढ़ने के पश्चात् मैंने इस साधना के साथ-साथ अपने गुरुजी के मंत्र 'ॐ परमहंसावधूताय विद्महे, सत्यानन्दाय धीमहि, तन्नो गुरु प्रचोदयात्' का चौबीस बार जप करना शुरू किया है। स्वास्थ्य लाभ के साथ-साथ जीवन की विषमताओं का सामना करने का गहन आत्मिक बल भी मुझे प्राप्त हो रहा है। जीवन के दु:खों में मुस्कुराना सिखाती है यह साधना!

41. सरल साधनाएँ तथा सूत्र (स्वामी शिवानन्द)

1. प्रतिपक्ष भावना की साधना- बुरे विचार प्रबल होने पर उन्हें भगाने में अपनी इच्छा शक्ति व्यर्थ न गँवाए। उन विचारों की उपेक्षा करिए, शान्त रहिए। उदाहरणतया जब किसी नई वस्तु को खरीदने की इच्छा प्रबल हो तो इच्छा की हानियों के विषय में सोचिए।

2. राग और द्वेष को जीतने की साधना - राग का अर्थ है आर्कषण अथवा आसक्ति।

द्वेष का अर्थ है विकर्षण अथवा घृणा। राग और द्वेष मन की दो वृत्तियाँ हैं और मलिन वासना का एक रूप हैं। जहाँ कहीं भी द्वेष है, वहाँ दु:ख और क्रोध हैं। जहाँ राग है, वहाँ सुख और भय हैं। आप मिठाई अथवा आम से राग रखते हैं क्योंकि उससे आपको सुख मिलता है। आप साँप अथवा बिच्छू से द्वेष रखते हैं क्योंकि वह आपको दु:ख देता है। राग और द्वेष को नष्ट किए बिना आप शान्ति, ज्ञान तथा भक्ति प्राप्त नहीं कर सकते हैं। मैत्री, करुणा, मुदिता तथा उपेक्षा के सद्गुणों के अर्जन से रागद्वेष क्षीण हो जाते हैं। वैराग्य तथा विश्वप्रेम का विकास करने से भी राग-द्वेष को जीता जा सकता है। अंहकार सेनापति है, अभिमान, राग-द्वेष, क्रोध तथा पाखण्ड सैनिक हैं।

3. कृपणता - कृपण मनुष्य जो धन का संग्रह करता है , वह न तो दान देता और न स्वयं ही उस धन का उपयोग करता है। जो कुछ भी वह कठिनाई के साथ एकत्र करता है, उसे अन्य ले जाते हैं। जिस प्रकार मधुमक्खी के छत्ते से मधु ले लिया जाता है, ठीक उसी प्रकार कंजूस से धन छीन लिया जाता है।

4. आशा ही कष्ट देती है। आशा के परित्याग से मनुष्य परमानन्द को प्राप्त करता है।

5. विषयों के प्रति उदासीनता उस खड्ग की भाँति है जिससे मनुष्य अपनी कामनाओं के धागों को काट सकता है।

6. जगत दीर्घ स्वप्न है तथा केवल दु:खों से पूर्ण है।

7. यह समय (सौभाग्य तथा दुर्भाग्य) भी गुजर जाएगा।

8. हे ईश्वर तेरी ही इच्छा पूर्ण होगी।

9. मैं शरीर नहीं हूँ। मैं मन नहीं हूँ। मैं अजर, अमर, अविनाशी आत्मा हूँ।

42. साधना का एक सत्य अनुभव

ईश्वर की कृपा से ही व्यक्ति उसे जान पाता है , नहीं तो व्यक्ति का तप, तप ही रह जाता है। अपार करुणा के कारण ही उसने मुझ पर अपनी तुच्छ दृष्टि डाली है और साक्षात दर्शन दिया। आँखों का धोखा नहीं। देखा और देखता ही रह गया ! मनोहारी मूर्ति ! वंशी की धुन भी सुनाई पड़ी ! एकदम आसमानी रंग, मुस्कराते हुए कृष्ण; श्याम शरीर ; अणु-अणु तरंगित था ! पूर्ण प्रकाश से भरा हुआ ! क्या वर्णन करुँ, कैसे वर्णन करूँ, लेखनी में शक्ति नहीं है ! शांतिपाठ के समय सुबह 6:30 बजे घटी यह घटना जीवन को ओत-प्रोत कर गई ! वह तिरछी चितवन इतनी बांकी है, सुमनोहर है, वर्णनातीत है ! काली कजरारी आँखें चुम्बक की भाँति आकर्षित करती हैं ! तभी तो उनका नाम कृष्ण पड़ा है ! (स्वामी देवशंकरानंद - 25.5.81)

43. When I Asked God...

When I Asked God for strength
He Gave Me Difficult Situations to Face.
When I Asked God for Brain & Brown.

He Gave Me Puzzles in Life to Solve
When I Asked God for Wealth
He Showed Me How to Work Hard.
When I Asked God for Favors
He Showed Me Opportunities to Work Hard
When I Asked God for Peace
He Showed Me How to Help Others
God Gave Me Nothing I Wanted
He Gave Me Everything I Needed - Swami Vivekananda

44. ANYWAY (Swami Sivananda)

People are unreasonable, illogical
and self centered. Love them Anyway
If you do good. People will accuse you
of selfish ulterior motives. Do good Anyway
If you are successful you win false
friends and true enemies. Succeed Anyway
The good you do today will be.
forgotten tomorrow. Do good Anyway
Honesty and frankness make you
vulnerable. Be honest and frank Anyway
People favor underdogs but follow only
top dogs. Fight for some underdogs Anyway.
What you spend years buildings may
be destroyed overnight. Build Anyway.
People really need help but may attack
you if you help them. Help people Anyway.
Give the world the best you have
and you'll get kicked in the teeth.
Give the world the best you've got Anyway.

45. I asked My Guru (Swami Niranjan)

For strength that I may achieve.
I was made weak that I might learn humbly to obey
For health that I might do great things .
I was given sorrow & infirmity that I might do better things.
For riches that I might be happy.
I was given poverty that I may be wise.
For Power that I might have the praise of men .

I was given weakness that I might feel the need of God.
For all things that I might enjoy life .
I was given life that I might enjoy all things.
I got nothing that I asked for but every thing I had hoped for.
Among men I am the most Richly Blessed.

46. A few Easy Sadhnas

I Conquest of fear- "Fear is a great obstacle in the path of Sadhna. Fear is generally the result of pain, injury and discomfort."- swami sivananda. In childhood I used to be afraid of the dark. By cultivating a strong faith in God, I overcame that fear. During the worst phase of rheumatoid arthritis I strengthened this faith. When I was not able to walk on the road, I used to go alone assuming God as my companion. He has always helped me in difficult times.

A man comes home from the office at night. His step falters on a piece of rope. He thinks that it is a snake. He faints due to fear. A wise old man comes with a torch & discovers the truth. He pours water over fainted man & shows him the rope in torch light "Fear is purely an imaginary non-entity." - Swami Sivananda.

II Sadhna For controlling Anger - Anger destroys all spiritual merits in a moment. Desire is the chief cause of anger. Develop patience & think of its advantages. Try to control first small ripple of irritability when it arises in the subconscious mind. Drink water. Leave the place at once. Count one to twenty to divert your mind. Do not argue. Be regular in your japa, meditation, asanas & pranayama to increase your inner strength. Daily observe Mouna for two hours. Think Constantly about harmful effects of anger. Do introspection.

III Controlling Mind- sit alone (early morning) and watch the vrittis of mind. Remain as a Saakshi (witness) Enquire "who am I ?" Do vichara & meditate on Atman. Destroy the fuel of desire & the fire of thought will be extinguished. Do a thing which the mind does not want to do. Don't do a thing which the mind wants to do. In Kaliyuga Kirtan (Singing of Lord's name) is the easiest method to control mind.

IV Food of The Soul- Paramhansa Niranjanananda Saraswati came to Munger Ashram at the tender age of 4 years.

Once Sri Swami Ji (Swami Satyananda) went on a tour. He asked Swami Niranjan to take care of the garden. When he came back after a few days. he found that all plants were dying. Sri Swami Ji asked him whether he had taken care of the plants or not?

Swami Niranjan said, " I used to wipe dust from each leaf daily. He said, "If there was an insect, I used to remove that also. " Sri Swami ji asked. " Did you water the plants?" He said, "No." Then Sri Swami Ji explained that watering the roots of the plants was essential for their survival.

We all need to water our soul in the form of worship, chanting of mantras and selfless service. Our soul is getting weaker and weaker in the absence of this water.

GOOD DEEDS ARE THE FOOD OF THE SOUL. - Swami Niranjan

47. मेरा संक्षिप्त परिचय

मैंने सन् 1993 में 34 वर्ष की अत्पायु में अनेक वर्ष पुराने कमर दर्द की अधिकता के कारण आखिरी विकल्प के रूप में योग की शरण ग्रहण की थी। योगासनों को आस्था, विश्वास और लगन से नियमित रूप से करते-करते न केवल मेरा कमर दर्द पूर्णतया समाप्त हो गया अपितु सूर्य नमस्कार के अभ्यास (जो आचार्य ने मुझे एक वर्ष बाद सिखाया था) से मेरा तन-मन एक नूतन ऊर्जा और स्फूर्ति से भर उठा था। सन् 1997 में योगाभ्यास करते-करते मेरा आध्यात्मिक जागरण हुआ। गुरु की असीम अनुकम्पा का वरद हस्त मैंने पल-पल अनुभव किया तथा एक नूतन आनंद का रसास्वादन किया। सन् 2001 से सन् 2003 तक मैंने संधिवात गठिया (रोग) का भयावह रूप देखा जिसने मुझे पराधीन और अशक्त बना दिया था और मैं पहिया कुर्सी में आ गई थी। सन् 2006 में मेरे आध्यात्मिक उत्थान के लिए गुरु जी ने लेखन की यह सेवा प्रदान की क्योंकि मेरी हार्दिक इच्छा थी कि मैं अपने चमत्कारिक स्वास्थ्य लाभ को जन-जन तक पहुँचाऊँ। मैं जानती हूँ कि गुरु जी के सशक्त हाथों में, मैं केवल और केवल एक यंत्र हूँ। भोजन का संयम, नियमित योगाभ्यास (सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन, भुजंग एवं शलभासन, उदर श्वसन; नाड़ी शोधन, गुंजन, उज्जैयी, भस्त्रिका तथा कपाल भाति प्राणायाम), प्रभुनाम संकीर्तन एवं भजन सुनना, ध्यान करना, मंत्र जप तथा स्वाध्याय मेरी दिनचर्या के अभिन्न अंग हैं। यह सेवा ही मेरी साधना का प्रमुख अंग है। मेरे जीवन के व्यावहारिक मंत्र हैं :-

(1) "अपमान सहो, आघात सहो-सबसे ऊँची साधना" - स्वामी शिवानन्द।

(2) "प्रशंसा जहर है और निन्दा तुम्हारा गहना।" - स्वामी शिवानन्द।

(3) "ईश्वर जानता है कि हमें क्या चाहिए। कितना आश्चर्य है कि हम सोचते हैं वह नहीं जानता!"

- स्वामी सत्यानन्द। (4) "ईश्वर का हर विधान मंगलमय है। हे ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो।" - माँ ज्ञान (5) "प्रत्येक परिस्थिति और अवस्था के बारे में कुछ सकारात्मक सोचना और कहना ही सफलता का रहस्य है।" - स्वामी शिवानन्द (6) एक भला काम कभी भी व्यर्थ नहीं जाता।

48. अब तक छप चुकी पुस्तकों की सूची

1. सत्संग -1500 प्रतियाँ
2. बच्चों के लिए योग का महत्व - 1000 प्रतियाँ
3. संतो के जीवन से सच्ची कहानियाँ - 1500 प्रतियाँ
4. परमगुरु स्वामी शिवानंद - एक श्रद्धांजलि - 1000 प्रतियाँ
5. An Autobiography - 1000 Copies
6. रोग और मैं - प्रथम संस्करण-2000 प्रतियाँ, द्वितीय संस्करण-1500 प्रतियाँ (भिलाई इस्पात संयंत्र के सौजन्य से मुद्रित) तृतीय संस्करण - 1000 प्रतियाँ, चतुर्थ संस्करण - 1000 प्रतियाँ (इंडियन ऑयल कारपोरेशन के सौजन्य से मुद्रित)
7. गुरु एक तत्व - 2000 प्रतियाँ
8. मेरी कहानी मेरी जबानी - 1000 प्रतियाँ
9. गृहस्थों के लिए योग साधना - 1000 प्रतियाँ
10. आज की त्रासदी - 1000 प्रतियाँ
11. स्त्री एक शक्ति - 1000 प्रतियाँ
12. मेरी आध्यात्मिक यात्रा - 1000 प्रतियाँ
13. मेरा संघर्ष - 1500 प्रतियाँ
14. क्या पाया मैंने अध्यात्म से - 1500 प्रतियाँ
15. मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद - 1500 प्रतियाँ
16. योग और शिक्षा - प्रथम संस्करण - 1500 प्रतियाँ, द्वितीय संस्करण - 1500 प्रतियाँ (भिलाई इस्पात संयंत्र के सौजन्य से मुद्रित) तृतीय संस्करण - 1000 प्रतियाँ
17. वृद्धावस्था एक अभिशाप अथवा वरदान - प्रथम संस्करण - 2000 प्रतियाँ द्वितीय संस्करण - 2000 प्रतियाँ (भिलाई इस्पात संयंत्र के सौजन्य से मुद्रित)
18. सत्संग I - 2000 प्रतियाँ
19. सत्संग II - 2000 प्रतियाँ
20. सत्संग III - 2000 प्रतियाँ
21. लघु कथाएँ - 3000 प्रतियाँ
22. योग का सूक्ष्म रूप - 3000 प्रतियाँ
23. मैं - एक चिकित्स्य चमत्कार - 3000 प्रतियाँ

49. दानदाताओं की सूची

काव्या अग्रवाल	10,000
आलोक अग्रवाल	2,500
योग साधना केन्द्र, हनुमान मन्दिर	2,102
अनिका जोशी	2,000
गौरव भट्ट	1100
लक्ष्मण कुमार अरोरा	1100
जी.पी. दुबे	1000
डी.बी.एस.पी. पटनायक	1000
गौरव महेश्वरी	1000
मनन पाल	1000
दिव्या साहू	1000
आन्या अग्रवाल	500
वीर चोपड़ा	500
सविता मुरजानी	500
सुष्मिता सरकार	335
आरव	250
समर्थ मिश्रा	200
मीरा देवी	100

"आध्यात्मिक ज्ञानदान का पुण्य दूसरे दान के पुण्य से 16 गुणा अधिक है।"
- महर्षि वेदव्यास

"दो और देते ही रहो। प्रचुरता में प्राप्त करने का यही रहस्य है। जो कुछ तुम्हारे पास है, उसे दूसरों के साथ बाँटो।" - स्वामी शिवानंद

आपका अल्प एवं वृहद दान सहर्ष स्वीकार्य है।

Power of Mantra - (Swami Satyananda)

Mantra is so powerful that it can change your destiny, economic situation and physical structure. If you want mantra to change the whole structure of your life, you must practice it regularly, every morning and evening.

क्रोध नियंत्रण की साधना (स्वामी शिवानन्द)

क्रोध एक क्षण में ही समस्त आध्यात्मिक गुणों को नष्ट कर देता है। संसार में रहते हुए जिसने अपने क्रोध को नियंत्रित कर लिया है, वह योगी है। धैर्य के द्वारा क्रोध पर विजय पाई जा सकती है। जैसे ही क्रोध की प्रथम लहर आपके अन्त:करण में उदित हो, उस पर नियन्त्रण का अंकुश लगाइए। यदि क्रोध नियंत्रित न कर पाएँ तो उस स्थान को तुरंत छोड़ दें। ऊँ का उच्चारण करते हुए सैर करिए। थोड़ा सा ठण्डा पानी पीकर एक से 20 तक धीरे-धीरे गिनती गिनिए। बहस मत करिए। 'देहो नाहम्' अर्थात् मैं देह नहीं हूँ, यह वाक्य बार-बार दोहराइए। जप, प्राणायाम, ध्यान, कीर्त्तन नियमित रूप से करने से आन्तरिक आध्यात्मिक शक्ति में वृद्धि होती है। सात्विक भोजन भी क्रोध को नियंत्रित करने में मदद करता है। क्रोध की हानियों का निरन्तर मनन-चिन्तन करिए।

यह 24 वीं ज्ञान पुष्पमाला, मैं परमगुरु श्री स्वामी शिवानंद के ज्ञान यज्ञ में सादर समर्पित करती हूँ।

प्रथम संस्करण : 2014
(3000 प्रति ज्ञान यज्ञ हेतु नि:शुल्क वितरणार्थ)

डर को जीतने की साधना

एक डरपोक व्यक्ति सदैव डरता रहता है और अपने जीवन में कुछ भी (सांसारिक अथवा आध्यात्मिक) प्राप्त नहीं कर पाता है। बचपन में मुझे अन्धेरे से बहुत डर लगता था। ईश्वर में दृढ़ विश्वास जगाने से मैंने उस समय डर पर विजय पाई थी। संधिवात गठिया के रोग से जूझते हुए जब सड़क पर चलना मेरे लिए दुष्कर था तो प्रभु को अपना साथी मान कर, मैं अकेली ही सैर करने चली जाती थी। डर का कोई अस्तित्व नहीं है। साहस के गुण का मनन-चिन्तन करने से हम सरलता से डर पर विजय प्राप्त करने की कला का विकास कर पाते हैं।

ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी

ज्ञान यज्ञ वैलफेयर सोसायटी एक दातव्य संस्था है जिसका गठन परमगुरु स्वामी शिवानंद, मेरे सद्गुरु परमहंस स्वामी सत्यानंद एवं परमहंस स्वामी निरंजनानंद के अपरोक्ष निर्देशन में लोक कल्याण के लिए किया गया है। इस संस्था का उद्देश्य है - "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय।"

कवर -परमहंस स्वामी सत्यानंद एवं परमहंस स्वामी निरंजनानंद

आभार

मैं समस्त दानदाताओं तथा कार्यकर्ताओं की आभारी हूँ जिन्होंने लोक कल्याण के इस पुनीत कार्य में अपना महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। परमपूज्य श्री स्वामी शिवानन्द का अनुग्रह एवं भगवत् कृपा समस्त दानदाताओं तथा कार्यकर्ताओं पर सदा बनी रहे। उन्हें स्वास्थ्य, सुख शांति एवं दीर्घायु प्राप्त हो तथा उनकी आध्यात्मिक उन्नति हो।

भविष्य के निर्माता

हम अपने भविष्य के निर्माता स्वयं हैं। वर्तमान में जो भी हमें मिला है वह हमारे पूर्व जन्म के कार्यों के फलस्वरूप मिला है। अनेक सन्तों ने इसे ही प्रारब्ध कहा है। व्यक्ति को अपने जीवन में जब सब कुछ अच्छा-अच्छा मिलता जाता है तो वह अनेक बार अहंकार/अभिमान के सागर में डूब कर स्वयं को कर्त्ता, नियंता मान बैठता है। जीवन में दु:ख, कष्ट अथवा परेशानियाँ व्यक्ति को झँझोड़ती हैं और उसे सांसारिक वस्तुओं तथा संबंधों की निस्सारिता का अहसास करवाती हैं। ऐसे समय व्यक्ति अपने अहम् का चश्मा उतारता है और अपने अच्छे तथा बुरे कर्मों का विवेचन करता है। यही वह बिंदु है जहाँ से व्यक्ति चाहे तो अपने जीवन की धारा स्वार्थ से परमार्थ की ओर, सांसारिकता से आध्यात्मिकता की ओर मोड़ सकता है।

जीवन में सम रहने की साधना

सुख में सजग रहते हुए जब हम यह वाक्य दोहराते हैं 'यह समय भी बीत जाएगा' तो अनावश्यक अंहकार से बच पाते हैं। दु:ख में भी यह वाक्य बार-बार दोहराने से मन एक हद तक शान्त रह पाता है और हम विषाद के गर्त में गिरने से बच जाते हैं। इस वाक्य के नियमित अभ्यास द्वारा निम्न मन की नकारात्मक वृत्तियों पर अंकुश सहज ही लगाया जा सकता है।

मन को नियन्त्रित करने की सरल साधना

संसार में रहते हुए यह निम्न मन हमें इन्द्रियों के माध्यम से दिन-रात इच्छाओं का गुलाम बनाता है। स्वामी शिवानन्द ने लिखा है - यदि हम निम्न मन का कहना नहीं मानते तो इसकी शक्ति धीरे-धीरे क्षीण हो जाती है और हमारी इच्छा-शक्ति बढ़ जाती है। उदाहरणतया ग्रीष्म ऋतु में यदि आपकी इच्छा कूलर अथवा ए.सी. चलाने की हो तो उसे पूरा मत करिए। स्वामी सत्यानन्द की तपस्थली रिखियापीठ में अनेक वर्षों तक पंखे भी नहीं थे! स्वामी शिवानंद कभी भी पंखा नहीं चलाते थे।